श्री वृन्दावनलाल वर्मा
की
उपन्यास कला

['झाँसी की रानी' एवं 'मृगनयनी' में]

लेखक—

प्रो० रामचरण महेन्द्र, एम० ए०

हरबर्ट कालेज, कोटा (राजस्थान)
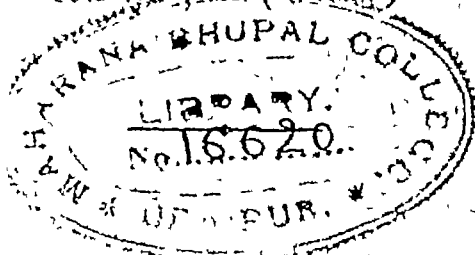
प्रकाशक—

सरस्वती पुस्तक सदन, मोतीकटरा, आगरा

प्रथमावृत्ति 1000 | जुलाई १९५३ | मूल्य १।।)

भूमिका

श्री वृन्दावनलाल वर्मा ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र में स्थायी कला कृतियाँ उपस्थित कर रहे हैं। न केवल कला की दृष्टि से, वरन ये ऐतिहासिक उपन्यास जीवन एवं समाज सम्बन्धी अनेक ज्वलन्त समस्याओं से परिपूर्ण हैं। इनमें वर्मा जी ने अतीतकालीन संघर्षों एवं भारतीय संस्कृति के सजीव चित्र खींचे हैं। हर्ष का विषय है कि आपके उपन्यास जनता तथा विद्यार्थी वर्ग का निरन्तर ध्यान आकृष्ट कर रहे हैं। 'मृगनयनी' पर वर्मा जी को पुरस्कार भी प्राप्त हो चुके हैं। कुछ उपन्यास पाठ्यक्रमों में भी नियत किए गए हैं।

वर्मा जी की उपन्यास कला के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता बहुत दिनों से बनी थी। हमने कई मित्रों से आग्रह किया कि वे उनकी कला पर लिखें किन्तु कहीं से कुछ आता न देख यह प्रारम्भिक आलोचनात्मक अध्ययन इस दृष्टि से प्रस्तुत कर रहे हैं कि विद्वान आलोचक इस ओर अध्ययन करें।

वर्मा जी की कला पर जो पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हुई हैं जैसे—प्रो० रामलाल सावल एम० ए० की 'झाँसी की रानी समीक्षा' श्री रामखेलावन चौधरी तथा डा० लक्ष्मीनारायण टण्डन की 'मृगनयनी समीक्षा', प्रो० हरस्वरूप माथुर की 'मृगनयनी समीक्षा' श्री श्यामजोशी एम० ए० की 'झाँसी की रानी एक दृष्टि' आदि इन सभी से, तथा भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख तथा आलोचनाओं से हमें इस पुस्तक की सामग्री संकलन में बहुत सहायता मिली है। अतः हम इन सभी विद्वानों के हृदय से कृतज्ञ हैं। हमारा अनुरोध है कि विद्यार्थी सम्बन्धित सभी आलोचनात्मक पुस्तक को पढ़कर अपनी योग्यता बढ़ावें। इस पुस्तक का उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी स्वयं वर्मा जी की कला के विषय में सोचे और स्वयं मौलिक दृष्टि से विचार करना सीखें।

हरबर्ट कालेज, —प्रो० रामचरण महेन्द्र एम० ए०
कोटा (राजस्थान)

विषय सूची

तृतीय खण्ड : झांसी की रानी लक्ष्मीबाई

१—कथानक सौन्दर्य :—

(१) महत्व (२) कथावस्तु विकास (३) उदय (४) मध्यान्ह (५) अस्त (६) कथानक की विशेषताएँ (वस्तु विन्यास-पटुता, असम्बद्ध घटनाएँ, रोचकता और कुतूहल)

२—चरित्र चित्रण :—

(१) लक्ष्मीबाई (२) गंगाधरराव (३) तात्या टोपे (४) पीर अली (५) सागरसिंह डाकू (६) अली बहादुर (७) कप्तान गार्डन (८) खुदाबख्श (९) बरहानुद्दीन (१०) दीवान दूल्हाजू (११) रघुनाथसिंह (१२) जवाहरसिंह (१३) नारी पात्र :—सुन्दर, मुन्दर, काशीबाई, जूही, झलकारी।

चरित्र चित्रण की विशेषताएँ :—(१) आदर्शों की सृष्टि (२) स्थिर एवं गति शील चरित्र (३) वर्गगत और व्यक्तिगत पात्र (४) मनोवैज्ञानिक आधार।

३—वातावरण :—

(१) ऐतिहासिक (२) राजनैतिक (३) सामाजिक एवं धार्मिक (४) प्राकृतिक।

४—मुख्य समस्याएँ :—

५—शैली-भाषा एवं रस

प्रथम खण्ड

श्री वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास

हिन्दी उपन्यास साहित्य में श्री प्रेमचन्द जी के पश्चात् श्री वृन्दावनलाल वर्मा का नाम अग्रगण्य है। जहां प्रेमचन्दजी का क्षेत्र सामाजिक (विशेषतः ग्राम्य जीवन) है, वर्मा जी का मुख्य क्षेत्र ऐतिहासिक है। प्रेमचन्द जी ने ग्राम्य जीवन, समाज की अर्थ-समस्या, राष्ट्रीय आन्दोलन, विधवा जीवन, वेश्याएँ, जमींदार और पूँजीपतियों के जीवन की कुरूपता और समाज की विद्रूपताएं अंकित की और सुधारवादी मनोवृत्ति का परिचय दिया है। दूसरी ओर वर्मा जी ने अपने विशाल ऐतिहासिक अध्ययन के बल पर प्राचीन गौरवमय चरित्रों तथा तत्कालीन सांस्कृतिक वातावरण को जीवित कर व्यवहारिक आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की है।

यों तो वर्मा जी ने सामाजिक उपन्यासों की भी रचना की है, किन्तु इनमें वे इतने तन्मय नहीं हो सके हैं, जितने ऐतिहासिक उपन्यासों में खिल उठे हैं। बुन्देलखण्ड के स्थानीय इतिहास से संबंधित आपके ऐतिहासिक उपन्यास सब से सफल रहे हैं। कुछ उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के जीवन के अतिरिक्त तत्कालीन भारत की धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक अवस्थाओं पर भी प्रकाश डाला

है। इनमें आपने प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं वातावरण को पुनर्जीवित करने का सफल प्रयास किया है।

इनके उपन्यासों में जो सत्य-दृष्टि, चित्रण क्षमता और पुरातन आदर्शों के निर्देशन की प्रवृत्ति है, वह हिन्दी कथा-साहित्य में एक नूतन देन बन गई है। निःसंदेह, वर्मा जी ने इतिहास के सत्य को अधिक निकट से परखा है और इनके पात्र उधार लिए हुये नहीं, वरन चिर परिचित ऐतिहासिक मानव हैं, जो परिस्थितियों के अनुकूल जीवन से सतत संघर्ष वहन करते हैं।

साहित्यिक जीवन का विकास

वर्मा जी की साहित्यिक प्रतिभा का विकास किस क्रम से हुआ? इसका उत्तर स्वयं उन्होंने लिखा है। आप लिखते हैं—

"मैंने पहले पहल सन् १९०५ में एक उपन्यास लिखा था और दो नाटक। फिर सन् १९०६ में तीन नाटक लिखे। इसके उपरान्त सन् १९०८ तक चार नाटक लिखे। इनमें से एक छपा और १९०९ में जब्त भी होगया। फिर निबन्ध इत्यादि लिखता रहा और अधूरे नाटक उपन्यास भी। कविता का भी शौक था, परन्तु इसका पीछा मैंने जल्दी छोड़ दिया।"

एक दिन १९१७ में मैंने अपनी पुरानी रद्दी टटोली। बरसात के दिन थे। एक मटके मे काफी बरसाती पानी भरा हुआ था। केवल पहला उपन्यास तो न जाने किस लोभ से रख लिया, बाकी को जल-समाधि दे दी।

१९०८ मे बुद्ध का जीवन-चरित्र लिखा था जो राजपूत प्रेस आगरा से छपा था। कुछ छोटी-छोटी पुस्तकें कलकत्ते के भारत प्रेस में सन् १९०९ मे छपीं थीं। अब जो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है, वे इस प्रकार हैं —

वर्मा जी का साहित्य

१—ऐतिहासिक उपन्यास:—(१) गढ़ कुंडार (२) विराटा की पद्मिनी, (३) झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, (४) मुसाहिबजू, (५) छत्रसाल, (६) सत्तर सौ बत्तीस, (७) शाह गफूर, (८) आनन्द-घन, (९) ललितादित्य, (१०) राणा सांगा, (११) माधव जी सिंधिया, (१२) टूटे कांटे, (१३) मृगनयनी; (१४) कचनार।

२—सामाजिक उपन्यास:—(१) कुण्डलिचक्र, (२) प्रत्यागत (३) हृदय की हिलोर, (४) प्रेम की भेंटें, (५) कभी न कभी, (६) लगन, (७) अचल मेरा कोई, (८) शबनम, (९) सोना।

३—ऐतिहासिक नाटक:—(१) फूलों की बोली, (२) हंस-(३) झांसी की रानी, (४) जहांदरशाह।

४—सामाजिक नाटक:— १) धीरे धीरे, (२) राखी की लाज (३) बाँस की फाँस, (४) पायल, (५) मंगलसखा, (६) कब तक (७) पीले हाथ, (८) सगुन, (९) काश्मीर का कांटा, (१०) टण्टा गुरु।

५—एकांकी नाटक:—(१) नीलकण्ठ, (२) शासन का डंडा, (३) कनेर, (४) लो भाई पाँचों लो, (५) टंटा गुरु, (६) नरक का चिड़ीमार (अनुवाद)

६—कहानियां:—(संग्रह) (१) हारसिंगार (२) कलाकार का दण्ड (३) दबे पांव।

वर्मा जी के ऐतिहासिक उपन्यास

वर्मा जी के सामाजिक उपन्यासों की संख्या भी पर्याप्त है और वे एक स्वतन्त्र पुस्तक का विषय हैं। इस पुस्तक में हम उनके ऐतिहासिक उपन्यासों (विशेषतः उनकी सर्व श्रेष्ठ कृतियां 'मृगनयनी

और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई') पर विचार करेंगे। अपने ऐतिहासिक रोमांटिक उपन्यासों द्वारा वर्मा जी ने हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक नवीन अध्याय खोला है। उनके पीछे पर्याप्त खोजबीन और ऐतिहासिक अनुसन्धान है। अपने उपन्यासों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में वर्मा जी ने विशेष श्रम किया है। कहीं-कहीं तो इतिहास की सत्यता एवं सूक्ष्मता का उन पर प्रभाव रहा है कि उनके इतिहासकार ने उपन्यासकार को दबा सा लिया है।※ कहीं कहीं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सत्यता के लिये उपन्यासकार शुष्क ऐतिहासिक वर्णनों को रखने का लोभ संवरण नहीं कर सके हैं।

ऐतिहासिक हिन्दी उपन्यास साहित्य में वर्मा जी युगान्तरकारी कहे जा सकते हैं। वर्मा जी जिस समय हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में अवतीर्ण हुए ऐतिहासिक उपन्यास क्षेत्र अविकासित दशा मे था। बंगला मराठी और गुजराती से अनूदित होकर कुछ उपन्यास आ रहे थे। श्री किशोरीलाल गोस्वामी के इने गिने प्रारम्भिक उपन्यास थे। वर्मा-जी ने ऐतिहासिक उपन्यास को दृढ़ता से ग्रहण किया और लेखकों का ध्यान इस उपेक्षित वर्ग की ओर आकृष्ट किया। 'वास्तव में देखा जाय तो ऐतिहासिक उपन्यासों का श्री गणेश वर्मा जी ने ही किया।

※ श्री रामगोपाल विद्यालंकार की यह सम्मति देखिये—"झांसी की रानी" लेखक की १४ वर्ष की ऐतिहासिक खोज-बीन का परिणाम है। अतएव ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्त्व असन्दिग्ध है, परन्तु प्रस्तुत उपन्यास को हम उपन्यासों की अपेक्षा इतिहास के ग्रन्थों की श्रेणी में रखना अधिक पसन्द करेंगे। बीच बीच में अनेक स्थलों पर इस ग्रन्थ के ऐतिहासिक वर्णन, वार्तालाप, भाव प्रकाशन, भाषा और शैली इत्यादि मनोरंजक एवं उत्कृष्ट होते हुये भी, इसका कथानक उपन्यासों सरीखा नहीं बन पड़ा है: हां, उस समय की राजनैतिक दशा का ज्ञान भली भांति हो जाता है। —'वीर अर्जुन— २० आषाढ़ संवत् २००४

उनके 'झाँसी की रानी', 'गढ़ कुंडार' आदि शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते है।' ×

उपन्यासकार के रूप में वर्मा जी मुंशी प्रेमचन्द की तरह अपने क्षेत्र में अद्वितीय हैं, बल्कि यों कहना चाहिए कि ऐतिहासिक उपन्यासों के लेखक रूप में सर्वश्रेष्ठ हैं। उनके 'गढ़ कुंडार', 'झांसी की रानी' 'विराटा की पद्मनी' नामक ऐतिहासिक उपन्यास उनकी इस अद्वितीयता और सर्वश्रेष्ठता के अमर गौरव चिह्न हैं। 'कचनार' उसी श्रृङ्खला की नई सबल कृति है। मेरी दृष्टि में वर्मा जी साहित्य जगत के एक ऐसे सिद्ध योगी हैं, जो अपनी मन्त्र-पूत लेखनी से इतिहास के विस्तृत कंकाल को छू कर, उसे वास्तविक रंग रूप और आकृति प्रदान करके पुनरुज्जीवित तो करते ही हैं, साथ ही अमर भी बना देते हैं। वर्मा जी इस कौशल का जीता जागता उदाहरण 'गढ़ कुंडार', 'झांसी की रानी', 'कचनार' इत्यादि उपन्यासों में मिलता है। ÷

वर्मा जी की उपन्यास कला

१—ऐतिहासिक रोमान्सः—वर्मा जी के उपन्यास खोलते ही हम अतीत के सामन्ती दर्प, राजनैतिक उथल पुथल, राजपूती-शौर्य, युद्ध और प्रेम के संघर्ष पूर्ण युग में आ पहुंचते हैं, जिसकी कल्पना मन में स्फूर्ति उत्पन्न कर देती है। ऐतिहासिक वातावरण का सफल चित्रांकन उनकी कला का प्रथम आकर्षण है।

वर्मा जी ने जिस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं, वे युद्ध, प्रेम एवं वैचित्र्य से परिपूर्ण रोमांटिक शैली के हैं। रोमाँटिक रचना के अन्तर्गत हम वे प्रेम कथाएं रखते हैं, जिनकी पृष्ठभूमि युद्ध है, तथा जिसमें साहस, Spirit of adventure उत्साह, वीरता और

× —श्री श्याम जोशी एम० ए०

÷ —श्री चिरंजीत—'मनोरंजन' जनवरी ४९ पृष्ठ ५५

प्रेमिका के लिए मनन करते हैं। इनमें स्थानीय प्रकृति के चित्रण की बहुलता रहती है। रोमांटिक प्रेम कथाओं में निरन्तर सजीवता सतर्कता होती है। विघ्न बाधाओं से भरी हुई घटनाएं प्रेमी और प्रेमिका को पृथक रखती हैं, किन्तु अन्त में असंख्य प्रतिकूलताओं के बावजूद (जो प्रायः धीरोदात्त रहता है) प्रेमिका को प्राप्त करता है।

वर्मा जी के रूमानी उपन्यास की प्रमुख विशेषता यह है कि इन्होंने पाश्चात्य उपन्यासकारों ड्यूमा और वाल्टर स्काट की भांति घटना-प्रधान प्रेम कहानियों की सृष्टि की है। उनके उपन्यासों में एक सुन्दर मुख्य पात्री होती है, जिसके अद्भुत रूप, गुण शौर्य के कारण एक धीर वीर प्रकृति का उज्ज्वल चरित्र वाला नायक मुग्ध होता है, नाना कठिनाईयों में विघ्न बाधाएं, युद्ध इत्यादि पार कर अन्तत प्रेमिका को प्राप्त करता है। उसके प्रेम में सस्ती वासना-त्मक आधीन होकर, शान्त सच्चे प्रेम की दृढ़ता और कर्मण्यता होती है। पुरुष पात्र यदि शक्ति का अवतार कहा जाय तो स्त्री पात्र पवित्रता की प्रतिमा होती हैं। प्रमुख नारी पात्र (Heroine) के चरित्रों को प्रमुखता दी गई है। वह मूल संघर्ष में रहती है और कथानक उसके चरित्र के साथ इधर उधर संचालित होता रहता है। कुछ उपन्यासों का नामकरण भी इसी मुख्य आकर्षण केन्द्र के नाम पर हुआ है—जैसे—कचनार, झांसी की रानी, मृगनयनी इत्यादि। यह पात्री ही उपन्यास की धुरी बनती है जिस पर समस्त उपन्यास की घटनाएं नाचती रहती हैं। 'कचनार' में मानसिंह की अपेक्षा कलावती, मृगनयनी में राजा मानसिंह तोमर की अपेक्षा निन्नी, झांसी की रानी में, लक्ष्मीबाई के चरित्रों को प्रमुखता प्रदान की गई है। समस्त कथानक इन्हीं पात्रियों के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। ये ही पात्रियें मुख्य पात्रों के हृदय में साहस-भावना (Spirit of Adventure) उत्पन्न करती हैं। इन्हीं से नाना परिस्थियों और ना घटनाओं का निर्माण होता है। इनका प्रेम कथानक में प्रभावात्मक

तीव्रता और कुतूहल की भावना प्रदीप्त रखता है। प्रेम और साहस भावना से संयुक्त कथासूत्र आगे चलता रहता है।

वर्मा जी के चित्रण की सफलता इसमें है कि हम मूल पात्र-पात्रियों से पूर्ण तादात्म्य का अनुभव करने लगते हैं। उनके हर्ष मे प्रफुल्ल और कष्ट मे चिन्तित होते हैं। कुछ देर के लिये हम स्वयं अपनी पृथक् सत्ता विस्मृत कर बैठते हैं। वर्मा जी के उपन्यासों मे वर्णित घटनाओ मे जो सजीवता, मर्मस्पर्शिता है, वह हमारी रुचि बनाये रहती है। हम निरन्तर सरसता का आनन्द लेते रहते है।

इन रूमानी उपन्यासों में चित्रित प्रेम सम्बन्ध पवित्रता और उज्ज्वलता की ओर उन्मुख हैं। रोमान्सों में जो वासना की कालिमा संस्तापन और गन्दगी होती है, वर्मा जी के उपन्यास उससे सर्वथा मुक्त हैं। उनके प्रेमियों मे दृढ़ता और कर्मण्यता है। वे जिससे प्रेम करते है, सदा के लिये उसी के हो जाते हैं। भंवरावृत्ति उनमे कहीं भी नहीं है। उदाहरण के लिये वर्मा जी के 'गढ़ कुंडार' में तारा-दिवाकर, 'विराटा की पद्मनी' में कुमुद-कुञ्जर, 'कचनार' मे मानसिंह और कलावती, दलीपसिंह और कचनार, 'मृगनयनी' में लाखी-अटल, निन्नी-मानसिंह, 'झांसी की रानी' में गंगाधरराव और लक्ष्मीबाई, छोटी-नारायण शास्त्री, मोती खुदाबख्श, मुन्दर-रघुनाथसिंह, जुही-तात्या इत्यादि प्रेमी-प्रेमिकाएं दृढ़ और कर्मण्य हैं। कहीं कहीं तो इनकी पवित्रता के सम्मुख हमारा मस्तक नत हो जाता है।

वर्मा जी ने प्रेम चित्रण प्रायः दो प्रकार से है। प्रत्येक उपन्यास में हमें एक ऐसा जोड़ा मिल जाता है, जिसका प्रेम-निर्वाह आदर्श कहा जा सकता है। ये प्रेमी मार्ग में आने वाली नाना कठिनाइयों से विचलित नहीं होते, नाना अड़चनो का सामना करते हुए अन्त तक सच्चे प्रेमी बने रहते हैं। कहीं कहीं इनका त्याग, गहनता, तन्मयता इतनी अधिक है कि हमारा मस्तक श्रद्धा से नत हो जाता है। ये पात्र अपूर्व बलिदान की क्षमता रखते है। उदाहरण स्वरूप

युद्ध करते है और उचित अनुचित रीति से उन्हे प्राप्त करने की कोशिश करते है। 'मृगनयनी' में मालवा सुल्तान नसीरुद्दीन के बारह हजार बेगमें हैं, वह उनकी संख्या पन्द्रह हजार करने पर तुला हुआ है। अपने पिता को विष देकर इसने राज्य मानों विषय तृप्ति के लिये ही पाया है। मुसलमान पात्रों में इस प्रकार के अनेक व्यक्ति हैं।

युद्धों की पृष्ठभूमिः—

वर्मा जी ने इन उपन्यासों में युद्धों को पृष्ठभूमि (Background) के रूप में रखा है। इनका वातावरण युद्ध के आतंक से सर्वत्र उत्तेजित रहता है। 'गढ़ कुण्डार' और 'विराटा की पद्मिनी' में युद्धादि के दृश्यों द्वारा नाटकीय चमत्कार उत्पन्न करने के स्वाभाविक अवसर मिल गये हैं। 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' में सन् १८५७ की क्रांति, स्वातन्त्रता-आन्दोलन का प्रथम प्रयास, और राजनैतिक उथल-पुथल की सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना को आधार माना गया है। देश का भी स्वराज्य आन्दोलन और आजादी की भावनाएँ, भारतीय सैनिकों का विरोध, अंग्रेजों के विरुद्ध असंतोष और क्रान्ति की पृष्ठभूमि पर यह आधारित है। 'कचनार' में धामोनी और सागर के युद्धों को प्रमुखता दी गई है। डरू का धामोनी के विनाश की योजनाएं बनाना, शत्रु सेना में मिलकर कर्नल हो जाना, पिंडारियों द्वारा लूट मे भाग लेना, वध का सामना करने, दिलीपसिंह का सागर वालों से युद्ध, मरहठे गढ़पतियों मे संघर्ष, सैनिक गुसाइयों का सैन्य संचालन, युद्ध और राजनीति में रुचि—हमें आने वाली लड़ाइयों की निरन्तर सूचना देते रहते हैं।

'मृगनयनी' मे जिस काल को आधार माना गया है, वह छोटी बड़ी अनेक लड़ाइयों से सम्बन्धित है। इसका प्रमुख नायक ग्वालियर का राजा मानसिंह तोमर है, जिसने १४८६ से १५१६ तक राज्य किया। वर्मा जी ने इस राजा के चरित्र एवं युद्धों को पृष्ठभूमि मे रख

संघर्ष पूर्ण वातावरण को पृष्ठभूमि में रखकर वर्मा जी प्रेम, साहस, शौर्य और आदर्श की प्रेम कथाएं (Romances) लिखी हैं। वातावरण की ऐतिहासिक सत्यता एवं प्रभावोत्पादकता पर वर्मा जी ने बड़ी सतर्कता से काम लिया है। युद्ध, आखेट, प्रेम, शौर्य तथा मध्यकालीन सामन्ती युग के चित्र होने के कारण स्थानीय प्रकृति, विशेषतः बुन्देलखण्ड के समीप के वातावरणों के सजीव और विस्तृत चित्र भी अंकित किए गये हैं।

ऐतिहासिक सत्यता के निर्माण के लिए वर्मा जी ने कहानी से सम्बन्धित किलों, स्थानों, ग्रामों, प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थों, विविध इतिहासों तथा किंवदन्तियों से सहायता ली है। इन्हें पढ़कर प्राचीन युद्धों की स्मृति सजग हो जाती है। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम अन्तर्जगत् में कोई नाटक देख रहे हों। 'गढ़ कुण्डार' चौदहवीं शताब्दी के बुन्देलखण्ड की राजनैतिक उथल-पुथल को तरोताजा बनाता है, तो 'विराटा की पद्मनी' मुगल साम्राज्य के अन्तिम दिनों को मानस-पटल अंकित कर देती है।

युद्धों एवं आखेटों के वर्णन में वर्मा जी को स्वाभाविक दिलचस्पी है। वे घूमने-घामने और यात्रा के प्रेमी हैं। शिकार खेलते और ग्रामीण प्रदेश में रहते हैं। अतः ग्राम्य वातावरण एवं विशेषतः बुन्देलखण्डी संस्कृति का प्रमाणिक चित्रण कर सके हैं।

घटना बहुलता:—

वर्मा जी घटना प्रधान उपन्यास लेखक हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकार प्रायः इतिहास प्रसिद्ध बड़ी घटना की पृष्ठभूमि पर अपना कथानक खड़ा करता है।* इसके लिए वह अनेक छोटी छोटी घटनाओ का योग कर मूल कथानक को रोचक बनाता है। वर्मा जी ने समस्त युग का बुन्देलखण्ड, ग्वालियर, झाँसी इत्यादि का इतिहास लेकर अपने प्रमुख पात्रों का चुनाव किया है। इनके उपन्यासों में

प्रमुख पात्रों को छोड़कर अनेक गौण पात्रों का प्राधान्य है। इन गौण पात्रों के सम्बन्ध में अनेक छोटी बड़ी घटनाओं को जोड़ दिया जाता है। पात्रों की भरमार घटनाओं की धमाचौकड़ी निरन्तर उसी प्रकार चलती रहती है, जैसे स्टेज पर कोई न कोई अभिनेता कार्य व्यापार में संलग्न होता है। यही कारण है कि इनकी उपन्यास कला में नाटकीयता की मात्रा अधिक है अगणित घटनाओं से परिपूर्ण ये उपन्यास पाठक का मन उलझाये रहते हैं। उपन्यास में चलनेवाली विभिन्न धाराओं, कथा सूत्रों का संचालन बड़ी कुशलता से चलता रहा है। कहीं युद्ध है, तो कहीं सामन्तों, राजाओं की प्रेम कहानियां, आखेटों के प्रकार, शिकार, नौरहा, रण कौशल, सैनिकों के शौर्य, नर्तकियां नटों, जासूसी विभाग के व्यक्तियों के अद्भुत कार्य। कहीं गांधी युग की राष्ट्रीय जागृति के इतिहास, स्वाधीनता संग्राम की उथल पुथल को ले लिया गया है। 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' में देश काल का चित्रण कर लेने के कारण घटनाओं का बाहुल्य है। इन घटनाओं से देश में व्याप्त विविध प्रवृत्तियों पर प्रकाश पड़ता है।

इतिहास की प्रमाणिकता—

वर्मा जी उपन्यास लिखने से पूर्व कथानक की पृष्ठभूमि में प्रयुक्त ऐतिहासिक काल का विस्तृत अध्ययन करते हैं, प्रमाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों से इतिहासकारों के मत लेकर स्वयं अन्तिम निर्णय करते हैं। उपन्यासों में आये हुये सभी प्रमुख चरित्र कुछ को छोड़कर—ऐतिहासिक अनुसंधान की भित्ति पर ठहराये गए हैं। कहीं-कहीं आपने

---

* श्री हरस्वरूप माथुर एम० ए० की सम्मति देखिये—

"रोमांटिक उपन्यास घटना प्रधान होते हैं। लेखक के पास एक सुस्पष्ट कहानी की रूप रेखा या कहानी का होना नितान्त आवश्यक है। ड्यूमा, स्काट और वर्मा जी के पास कहने के लिए एक कहानी है। श्री कन्हैयालाल मुंशी के ऐतिहासिक रोमांसों में घटना प्रधान कहानी प्रमुख है। वर्मा जी के उपन्यासों में भी यही विशेषता (घटना प्रधानता) है।"

किम्बदन्तियों का भी उपयोग किया है; किन्तु उन्हें सदा यह ध्यान रहा है कि कहीं ऐतिहासिक वास्तविकता (Realism) की हत्या न हो जाय। कुछ चरित्रों के विषयों में प्रचलित दोहों, मन्दिरों, महलों चित्रों, मूर्तियों को कल्पना के स्पर्श से चरित्रों में उभारा गया है। 'मृगनयनी' का मानसिंह कला, संगीत, शिल्प, चित्रकारी का प्रेमी है। 'झांसी की रानी' में भारत का १८५६ के आसपास का देश राजनैतिक, सामाजिक, सामन्त युगीन परिस्थितियों का चित्रण है। यों तो 'झांसी की रानी' लक्ष्मीबाई की कथावस्तु प्रख्यात है किन्तु वर्मा जी ने प्रमाणिक ऐतिहासिक आधारों पर तत्कालीन परिस्थिति और वातावरण का चित्रण किया है। लक्ष्मीबाई के जन्म से पूर्व समग्र भारत में अंधकार, निराशा, अव्यवस्था और दुर्भाग्य राजाओं तथा नवाबों का विलास और शृंगार प्रियता, चारित्रिक पतन, अंग्रेजों का क्रमश: बढ़ता हुआ आधिपत्य, जनता का असंतोष, स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न, लक्ष्मीबाई का उदय एवं नेतृत्व—प्रमाणिक इतिहास के आधार पर खड़े किए गए हैं। झांसी ही नहीं, वर्मा जी ने समग्र भारत की देश व्यापी परिस्थिति पर प्रकाश डाला है। अपने उपन्यासों में प्रयुक्त सामग्री को अधिक से अधिक प्रमाणिक बनाने मे आपने विशेष ध्यान दिया है।

वर्मा जी ने इतिहास की प्रमाणिकता और सत्यता का इतना अधिक ध्यान रखा है कि कहीं-कहीं पाठकों को यह भ्रम हो जाता है कि वे उपन्यास पढ़ रहे हैं, या इतिहास ? 'झांसी की रानी' लेखक की १४ वर्ष की ऐतिहासिक खोज की छानबीन के परिणाम-स्वरूप लिखा गया है। अतएव ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्त्व असन्दिग्ध है, परन्तु कुछ आलोचक* इस उपन्यास को इतिहास-ग्रन्थों की श्रेणी में रखना अधिक पसंद करते हैं। लेखक तत्कालीन भारतीय राजनैतिक स्थिति के प्रति कहानी की अपेक्षा अधिक जागरूक हो गया है।

---

* श्री रामगोपाल विद्यालंकार

ग्रन्थ में कहीं-कहीं शुष्क ऐतिहासिक विवेचन के आ जाने से कथानक का आकर्षण कम हो जाता है और तन्मयता एवं उत्सुकता का प्रवाह टूट जाता है। इन स्थलों को पढ़कर तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक दशा का अच्छा ज्ञान हो जाता है, पर उपन्यास सरीखा आकर्षण कम हो जाता है।

कहीं-कहीं स्थानीय इतिहास के अतिरिक्त समग्र भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालने की चेष्टा की गई है। इससे इतिहास का प्रतिबिम्ब आश्चर्यजनक रूप में दीख पड़ता है, पर पाठक निरन्तर यह सोचता है कि यह शुष्क विवेचन अब समाप्त हो, अब समाप्त हो। वह इसमें रस नहीं ले पाता। वर्मा जी ने भूमिकाओं में सहायक इतिहास पुस्तकों, कुछ प्रलेखों (Documents) और प्राचीन उल्लेखों (Records) का भी उल्लेख कर दिया है। यह उनकी इतिहास की सत्यता का प्रमाण है।

बुन्देलखण्डी जीवन के मार्मिक चित्रों का उद्घाटन

बुन्देलखण्ड के जीवन, ऐतिहासिक, किलों, भीतरी स्थानों, मंदिरों, गढ़ियों, चित्रकारी, पुराने महलों, समीप के जंगलों, प्रसिद्ध नगरों तथा तीर्थ स्थानों, संस्कृति और भाषा के प्रति वर्मा जी के हृदय में अत्यधिक अनुराग है। आपके अधिकतर ऐतिहासिक उपन्यास बुन्देलखण्ड प्रान्त में सन्निहित हैं। कुंडार की गढ़ी (गढ़-कुण्डार); चन्देरी का किला, छतरपुर की टौरियां, झांसी का किला, झांसी की रानी के महल की चित्रकारी, नरवर का किला, धामोनी का किला तथा अनेक बुन्देलखण्ड के स्थानों तथा प्राकृतिक दृश्यों, जंगलों, वृक्ष और बावड़ियों का बड़ा सजीव चित्रण किया है। ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक अवस्थाओं तथा सामन्ती युग को वर्मा जी ने जीता-जागता प्रस्तुत कर दिया है। इनके उपन्यासों का अध्ययन कर

बुन्देलखण्ड की महत्ता, अतीतकालीन शौर्य तथा वहां का जीवन स्पष्ट हो जाता है।

वर्मा जी ने स्वयं लिखा है—"आप कभी बुन्देलखण्ड के भीतरी स्थानों पर घूमे हों, तो आपको स्मरण होगा कि हमारा यह दरिद्र-खण्ड कितना विभूतिमय है। हम लोगों के पास पैसे नहीं हैं, परन्तु हम लोग फिर भी फागें और राछरे गाते हैं, अपनी झीलो और नदी नालों के किनारे नाचते हैं और अपनी रंगीली कल्पनाओं में मस्त हो जाते हैं। हमारे यहां हाल में एक 'ईश्वरी' कवि हुआ है। इसका नाम भी यही था। इसकी फागें प्रसिद्ध हैं। गाड़ीवन, चरवाहों और मल्लाहों से लेकर राजा महाराजा लोग तक उसकी फागों को झूम-झूम कर गाते हैं। बिहारी के दोहों की तरह उसकी फागें भी छोटी-छोटी सी हैं। बहुत सरल भाषा में हैं—ओज और रस से ओत-प्रोत। प्रत्येक फाग किसी मनोभाव का एक सम्पूर्ण चित्र। ये ही नदिया-नाले, झीलें और बुन्देलखण्ड के पर्वत वेष्ठित शस्य श्यामल खेत मेरी प्रेरणा के प्रधान कारण हैं। इसीलिए मुझे Historical Romanee (ऐतिहासिक रोमांस) पसंद है।"

बुन्देलखंड का इतिहास गौरवमय है। कहते हैं भगवान रामचन्द्र ने इसी भू भाग के चित्रकूट पर आकर निवास किया था। नागवंश की राजधानी पद्मावती इसी भू-भाग पर स्थित थी नागवंश के पश्चात मौर्य वंशीय अशोक, सुंगवंशीय अग्निमित्र तथा पुष्पमित्र, गुप्त वंश के समुद्रगुप्त, कुमारगुप्त, नरसिंहगुप्त, हूण, तूर्यपणि, चन्देलवंशीय चन्द्र-ब्रह्म से लेकर प्रमर्दिदेव, पृथ्वीराज, यवनवंश के महमूद गजनवी, कुतुबुद्दीन ऐबक, अल्तमश, सिकन्दरलोदी, इब्राहीमलोदी, बाबर, हुमायूँ, अकबर, महाराना संग्रामसिंह, शेरशाह तथा बुन्देलवंशीय वीरसिंहदेव, चम्पतराम, छत्रसाल इत्यादि वीरो की लीला भूमि यही प्रदेश रहा है। वर्मा जी की कला की सफलता इस बात में रही है कि उन्होंने अतीत बुन्देलखंड को पुनः जीता जागता प्रस्तुत किया

है। सामन्ती युग हमारे नेत्रों के सामने हरा भरा होकर अपने समस्त वैभव, युद्ध, संघर्षों के रूप में झूल उठता है।

प्रकृति चित्रण की बहुलता

स्वयं जङ्गली जीवन से निकट साहचर्य और शिकारी रुचि के होने के कारण वर्मा जी को प्रकृति के वातावरण से विशेष प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। बुन्देलखण्ड की प्राकृतिक सुषमा तो जैसे आपने अपने उपन्यासों में उड़ेल दी है। इस प्रान्त में प्राकृतिक रमणीयता के साथ साथ उर्वर होने के भी गुण हैं। जड़ी बूटी, कन्दमूल, अन्नादि सभी की प्रचुरता है। वर्मा जी के उपन्यासों में बुन्देलखंड के नदी, नद, सरोवरों, प्रपातों, वृक्षों, वनों, उपवनों का बड़ा सुन्दर सजीव वर्णन किया है।

"प्रकृति का यह चारु-चित्रण न तो सुनी-सुनाई बातों के आधार पर हुआ है, न पुस्तकों से पढ़कर जूठन को दूसरों के सामने फेंका है और न वर्षा की बहार, राजप्रासाद के प्रांगण में बैठ फव्वारों के उछलते रूप में देखी है। उन्होंने प्रकृति के चरणों में बैठ, उसकी गोद में लोट, और उसके मनोहर मुख के सामने बैठ, उसको ध्यान पूर्वक निहारा है। अपनी आंखों से, अपनी ही ऐनक से। दुनाली को कंधे पर सुलाकर वे जङ्गल या पहाड़ पर पहुँच जाते हैं। वे वन जहां दिन के प्रकाश में भी उल्लू खेलते हैं, वे सरिताएँ जो प्रेमी पाषाण हृदयों की निष्ठुरता की उपेक्षा कर आगे बढ़ जाती हैं; वे ऊँची पर्वत श्रेणियां जहां बादल-बिजली आंख मिचौनी खेलते हैं, वर्मा जी की तीर्थ भूमियां हैं। घंटों जहां सुधबुध खोकर समाधिस्थ होकर उस सुन्दरी का अप्रतिम लावण्य अपलक नयनचलकों से पीते नहीं अघाते। दायें-बायें से ऊपर-नीचे से चरणों में नतमस्तक हो, गोद में उछल-उछल कर, वक्षस्थल से आलिङ्गन बद्ध हो, कन्धों पर सवार हो

अनेक दृष्टियों एवं दिशाओं से आन्तरिक एवं बाह्य छवि को देख-देख पुलकित होते हैं।❀

वर्मा जी के प्रकृति चित्रण के कई रूप हैं—(१) कहीं अत्यधिक विस्तार है, तो कहीं (२) दो चार वाक्यों में ही चतुरता से सम्पूर्ण दृश्य को चित्रित करने के प्रयत्न हैं (३) वस्तुओं की सूची मात्र प्रस्तुत न कर, उसके वातावरण का प्रभाव भी अंकित किया है (४) सूक्ष्मता से गहराई तक पहुँचते हैं (५) प्रकृति का प्रसन्न मृदुल आह्लादकारी तथा प्रलयंकारी, अन्धकारमय, रौद्र रूप—दोनों ही में सफलता प्राप्त की है (६) प्रकृति और मानव का समन्वय कराया है (७) प्रकृति के गत्यात्मक चित्रण में आपको विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

यथातथ्य सूक्ष्म विश्लेषण प्रधान प्रकृति चित्रण की दृष्टि से 'विराटा की पद्मनी' सबसे सफल रचना है। इसमें प्रायः सभी प्रकार के उदाहरण उपलब्ध हो जाते हैं। एक उदाहरण लीजिये और इसके सूक्ष्म वर्णन (Detailed and minute description) पर विचार कीजिए—

"बिरवई से लगे हुए तीन चार महुवे के पेड़ थे। महुआ के पीछे से एक चक्करदार नाला निकलता था। दूसरी ओर वह पहाड़ी थी जो भुसावली पाटा कहलाती है। एक ओर बीहड़ जंगल अहीर की कुछ भैंसें नाले के पास चर रही थीं। एक लड़का कुछ धूप में, कुछ छाया में सोता हुआ जानवरों की देखभाल कर रहा था। घास आधी हरी आधी सूखी थी। करधई के पत्ते पीले पड़ पड़ कर गिरने लगे थे। नाले का पानी अभी नहीं सूखा था—कुछ भैंसें उसमें लोट लोट कर शब्द कर रही थीं। चिड़ियां इधर से उधर उड़कर शोर कर रही थी। सूर्य की किरणों में कुछ तेजी और हवा में थोड़ी उष्णता आ गई थी।"

—(विराटा की पद्मनी)

❀ प्रो० गोपीनाथ तिवारी

वीभत्स अन्धकार तथा कालिमा के चित्र बड़े गाढ़ बन पड़े हैं. 'मृगनयनी' जब चारों ओर से लाखों की गढ़ी शत्रु से घिरी हुई थी तब रात में उठी। उसने देखा—

"अतुल अन्धकार। निविड़ वन का कोई भी अंश नहीं दिख-लाई पड़ रहा था। ऊपर तारे छिटके हुए थे। दूर की पहाड़ियां लम्बी तानें सोती सी जान पड़ती थीं। टेढ़ी तिरछी बहती हुई सांक नदी की पतली रेखा जरूर झांई सी मार रही थी। दुर्ग पर घेरा डालने वालों के डेरे की आग सुलग सुलग कर राई गढ़ी के संकट को जगा जगा दे रही थी। वैसे राई की डांग में नाहर इत्यादि जंगली जानवर रात में प्राय: बोला करते थे, परन्तु आक्रमणकारियों की गंदा रौंदी के मारे वे बहुत दूर खिसक गये थे। सिवाय झींगुरों की चीं चीं के और कुछ सुनाई नहीं पड़ता था। सुनसान को छेदती हुई कभी कभी गढ़ी के भीतर "जागते रहो! जागते रहो!" की पुकारें भर सुन पड़ती थीं।"

—'मृगनयनी' पृष्ठ ४६२

'गढ़कुण्डार' का एक अन्धकार पूर्ण वर्षा कालीन भयानक प्राकृतिक चित्रण इस प्रकार है—

"पानी के किनारे एक घास के टीले के सहारे टिक कर वह पलो थर की पहाड़ी के विकट सुनसान सौन्दर्य को देखने लगा। इससे पहिले दिवाकर बुझती लौ के अनेक मनोहर पर्वत, झील, वन और नदियां देख चुका था, परन्तु एक ही स्थान पर प्रकृति की ऐसी भयानक छटा देखकर उसका चित्त मस्त हो गया। उसने अपने आप से कहा—"इस सुन्दर देश के लिये प्राण देना बड़े गौरव की बात होगी।"

वर्मा जी के प्राकृतिक वर्णन सजीव जीते जागते हैं। कहीं कहीं तो वे प्राकृतिक सौन्दर्य के चित्रण में अपने आप को पूर्ण विस्तृत सा कर बैठे हैं। उन्होंने प्रकृति को अपनी आंखों से देखा और चित्रित किया है, किसी रूढ़िवादी परम्परा से प्रभावित नहीं हुए हैं। जंगलों

की छोटी से छोटी वस्तु भी उनकी दृष्टि से नहीं छिपी है। जंगली जानवरों, चित्रमयी पर्वत घाटियां, नदियां, नाना ऋतुएँ प्रकृति के क्रिया कलाप अत्यन्त सजीवता से चित्रित हुए हैं! पंक्ति-पंक्ति में प्राण है, हृदय का स्पन्दन है। वर्मा जी ने भोगोलिक सचाई और वास्तविकता का विशेष ध्यान रखा है।

'गढ़ कुण्डार' और 'विराटा की पद्मनी' के वातावरण की सचाई वास्तविकता और सूक्ष्मता का रहस्य समझते हुये वर्मा जी ने अपने एक मित्र से कहा था, 'जब फ़ुरसत होती है, बन्दूक लेकर निकल जाता हूँ। दो-दो चार-चार दिन जंगलों पहाड़ों में घूमता रहता हूं। वहाँ जो दृश्य पसन्द आता है, काग़ज़ पर उसका शब्द चित्र खींच लेता हूँ। 'गढ़ कुण्डार' का अधिकाँश तो कुण्डार के दुर्ग के चारो ओर चक्कर काट कर लिखा है। 'विराटा की पद्मनी' लिखने के लिये कई बार खजुराहो हो आया हूँ। उसके भी कई परिच्छेद वहीं लिखे गए है।'*

इसी सम्बन्ध में उनके उपन्यासों मे आये हुए शिकार के दृश्यों के सम्बन्ध में निर्देश करना अप्रासंगिक न होगा। 'मृगनयनी' में गांव में रहने वाली निन्नी, लाखी और अटल तथा गांव के समीप के पहाड़ियों, नदियों एवं जङ्गलों में तीर से आखेट के अनेक सजीव चित्र मिलते हैं। मानसिंह तोमर शिकार का एक विराट आयोजन कर राई ग्राम में जाता है। आस पास के जंगलों से हँकाई करने वाले आते हैं। घने पहाड़ी जंगल में एक स्थान पर मानसिंह अन्य शिकारियों के साथ बैठ जाता है। लेकिन निन्नी और लाखी मचान पर नहीं बैठतीं। ये नीचे ही लक्ष्य बेध कर नाहर और अरने का शिकार करती हैं। इस हँकाई, शिकार तथा वहाँ के वातावरण को वर्मा जी ने बड़ी सजीवता और सचाई से प्रस्तुत किया है।

क्या कारण है कि जंगलों के वातावरण, जंगली जीवन, तथा शिकार के चित्र खींचने में वर्मा जी को यह अद्‌भुत सफलता प्राप्त हुई है? इसका उत्तर स्वयं उनके एक पत्र में मिल जाता है:—

---

* सुधा वर्ष १०, खण्ड १, संख्या ५ पृष्ठ ४१४

समीर और प्रभंजन में भी महक समा गई। रात और दिन संगति से पुलकित हो उठे।"

—विराटा की पद्मनी

जंगलों में मिलने वाले पशुओं के पद चिह्नों, उनके क्रिया कलाप, आदतों के वर्णन में सूक्ष्मता है। ये वर्णन वही व्यक्ति कलम की राह कागज पर उतार सकता है, जिसने अरनों, सुअर, घोड़ों तथा अन्य जानवरों के खुरों का गहराई से निरीक्षण किया हो। ये दुपहरी मे चिल्लाती हुई टिटहरी की ध्वनि ही नहीं सुनते प्रत्युत मछली के जल में उछलने का शब्द भी सुन लेते हैं।

आदर्शोन्मुख यथ र्थवाद

ऐतिहासिक उपन्यासकार को निरपेक्ष और अपने दृष्टिकोण को सर्वथा तटस्थ रखना होता है,। उसे देशकाल और अपने कथानक से सम्बन्धित पात्रों के चरित्रों की ऐतिहासिक सचाई की विशेष रूप से रक्षा करनी होती है। ऐतिहासिक उपन्यास के कथानक का केन्द्र किसी इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति का जीवन वृत्त एवं उसके कार्य व्यापार होते हैं, किंतु कल्पना के सहज स्पर्श से वह प्रासंगिक पात्र लाकर सूखे इतिहास की अस्थियों मे प्राण संचार करता है। इन गौण पात्रों, प्रासंगिक वस्तु का आयोजन एवं विस्तार से कथानक रुचिकर सुसंगठित और आकर्षक बन जाता है।

वर्माजी यथार्थवाद के पुजारी हैं। उन्होंने इतिहास का गहन अध्ययन कर अपने प्रमुख पात्रों के जीवन, चारित्रय के गुण; कार्यो की रूपरेखाएँ और वातावरण की सृष्टि की है। लोक प्रचलित किवदन्तियों तथा जनता के मतों को भी समझ बूझ कर उपन्यासों में प्रयुक्त किया है। सत्य की खोज करना उनका प्रधान लक्ष्य रहा है। जैसा प्रमाणिक इतिहास ग्रन्थों मे मिलता है- उस सत्य रूप को आकर्षक ढङ्ग से प्रस्तुत कर अपने यथार्थवादी दृष्टिकोण का परि-

चय दिया है। उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निर्माण वर्षों के अध्ययन, तत्सम्बन्धी स्थानों के भ्रमण और नाना इतिहास ग्रन्थों के मनन से हुआ है। सामन्ती युग को अपने समस्त सौन्दर्य और संघर्ष में वे चित्रित कर सके हैं।

उनके उपन्यासों मे इतिहास में वर्णित नाना-प्रकार के अच्छे बुरे दैवी आसुरी प्रवृत्तियों वाले पात्र हैं। उच्च स्तर के व्यक्ति है, तो निम्न स्तर के पशु कोटि के पात्र भी हैं।

'मृगनयनी' मे वर्णित मानसिंह, अटल, बैजू निन्नी, लाखी आदि सात्त्विक गुणो वाले वीर धीर उच्च चरित्र वाले व्यक्ति है, तो जन पीड़न करने वाले वासना के अन्धे नर-पशु भी है। गुजरात के महमूद बघर्रा के अगणित रक्तपात, मालवा में गयासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार प्रियता और अय्यासी, पठान सरदारो की लूट-खसोट, नसीर की १५ हजार बेगमे, वासना के उद्दीप्त पिल्ली—ये सभी पात्र निम्न कोटि के हैं। इसी प्रकार 'झांसी की रानी' मे लक्ष्मीबाई, सुन्दर, मुन्दर, काशी, मोतीबाई के चरित्रो में भारतीय नारी के उच्चतम गुण, वीरता, रमणी सुलभ भावुकता, कोमलता, संयम प्रस्तुत किया है; तो दूसरी ओर पीरअली दूषित मनोवृत्ति का एक नमूना है। गार्डन, एलिस, मालकम डलहौजी और ह्यूरोज सभी अंग्रेज पात्र भारत तथा यहां के व्यक्तियो से घृणा करने वाले हैं। गंगाधरराव पहले हमारे सामने दुर्बल, विलासी और क्रूर शासक के रूप में हमारे समक्ष आता है। 'कचनार' में कचनार दिलीप उच्चतम गुणों से विभूषित है, तो मान-सिंह, कलावती, ललिता आदि गिरी हुई मानवता के प्रतीक हैं। इस गुणदोष-मयी सृष्टि की तरह अच्छे बुरे, गुणी दोषी, देवता पापी, वीर और कायर सभी तरह के व्यक्ति इनके संसार मे है। सभी के चित्रण में वर्माजी ने गहन मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है। ये सभी उनकी यथार्थवादी दृष्टिकोण के ज्वलन्त प्रमाण है।

किन्तु कोरे यथार्थवादी चित्रण से वे सन्तुष्ट नहीं हैं। उनके कुछ चरित्रों में एक ऐसे आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की गई है जो जीवन की व्यवहारिकता से ओत-प्रोत होकर नैतिक दृष्टि से जनता के लिए कल्याणकारी है। कचनार, लक्ष्मीबाई, मृगनयनी, लाखी, मानसिंह, दिलीपसिंह आदि अनेक पात्रों में भारतीय सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रमुखता दी गई है। भारतीय ऐतिहासिक वीर, चरित्रवान्, उच्चवृत्ति के शासक सत् वृत्तियों के व्यक्तियों के आदर्श चरित्रों की ऐसी प्राण-प्रतिष्ठा की गई है, जो ऐतिहासिक सत्य से ओत-प्रोत होते हुए भी व्यवहारिक है। प्राय. किसी न किसी स्त्री पात्र के आदर्श जीवन की झांकी मिलती है। अधिकांश उपन्यास नारी गौरव की ही गाथाएँ हैं।

'मृगनयनी' में निन्नी और लाखी के चरित्र छोटी मोटी कमजोरियों के होते हुए भी सत्य, प्रेम, निष्ठा, दृढ़ता, वीरता और साहस में उज्ज्वल प्रकाश स्तम्भ की तरह खड़े हैं। मानसिंह की कलाप्रियता, प्रजावत्सलता, धीरता और शौर्य आदर्श हैं। 'झांसी की रानी, में मातृत्व और पत्नीत्व के दोनों आदर्श उतारे गए हैं। लक्ष्मीबाई एक वृद्ध विलासी पति पाने पर भी अनुरागिनी, पतिव्रता, वीर साहसी और नीति निपुण है। आचरण की उच्चता देशभक्ति, स्वातन्त्र्य प्रेम दृढ़ता, आत्मविश्वास आदि सम्पूर्ण दैवी विभूतियाँ उसमें केन्द्रित की गई हैं। 'कचनार' में दिलीप और कचनार का वासना रहित प्रेम उनका आत्मबलिदान, कष्ट, सहिष्णुता, परस्पर एक दूसरे की सहायता वृत्ति, साहस और धैर्य आदर्श हैं। इसी प्रकार के अनेकों पात्र एक व्यवहारिक आदर्शवाद से ओत-प्रोत हैं। ये पाठक के मन पर अपना कल्याणकारी प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहते। भारतीय आदर्शों के साथ-साथ जीवन की समस्त स्वाभाविकता उनके उपन्यासों में प्रतिष्ठित है।

'उन्होंने भारतीय इतिहास सर्व प्रथम दृष्टि उन्मेख करके प्राचीन संस्कारों को जगाया है। उनके हृदय की विशालता में अतीत-

गौरव का सरल-सत्य समाया हुआ है। दृष्टिकोण स्वस्थ, सरल और स्पष्ट है तथा उन्होंने अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यापक—जीवन की समग्रता में समाहित कर दिया है''उन्होंने अतीत के कथानकों के झरोखों से जो पुरातन भारतीय संस्कृति की शाश्वत झांकी मिलती है, वह प्रत्येक जिज्ञासु को इतिहास का मर्म समझने और अतीत की महानता से पुलकित होने का अवसर प्रदान करती है।' १

'आपके अधिकांश पात्र किसी न किसी आदर्श की ओर जाते और दूसरों के लिए पगडंडी बनाते दिखाई देते हैं—ऐसे आदर्श की ओर जिसका नित्य के जीवन से सम्बन्ध है, इस धरती पर चलने फिरने वाले आदमी जिसे पकड़ सकते हैं। यह आदर्श कोई स्वर्गीय, अव्यव्यवहारिक नहीं है। यह वह आदर्श है, जिस पर चलकर मानव यथार्थ मानव कहला सकता है; वह पशुता की श्रेणी से मानवों की पंक्ति में आ बैठने योग्य होता है। लेखक का यथार्थ आदर्शवाद की ओर उन्मुख है। यथार्थ के द्वारा आदर्श की ओर संकेत कर के जीवन को गतिशील बनाने की प्रेरणा दी है। जीवन के प्रति यही उनका अपना दृष्टिकोण है।

वर्माजी ने यथार्थ एवं आदर्श का कलात्मक समन्वय प्रस्तुत किया है। उनका आदर्श यथार्थ पर इतना नहीं चढ़ गया है कि अस्वभाविकता आ जाय, न यथार्थ इतना हट गया है कि व्यवहारिक न हो। उन्होंने यथार्थ को समाज और व्यक्ति के लिए कल्याणकारी मंगलमय रूप में प्रस्तुत किया है। कर्त्तव्य और कलाप्रियता; वीरता और प्रेम, यथार्थ और आदर्श का सर्वत्र संतुलन रखा है। प्रेम, युद्ध और सतत उथल-पुथल के मध्य रह कर भी हम उनके आदर्शवादी चरित्रों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते।

---

१ श्रीमती शचिरानी गुर्टू 'साहित्यदर्शन' पृष्ठ ३२०

२ प्रो० रामलालजी मॉवल एम० ए०

ऐतिहासिक होते हुये भी वर्मा जी के उपन्यासों में यत्र-तत्र समाज की नाना समस्याओं को उठाया गया है और विवेचन के पश्चात् एक मत दिया गया है। ये समस्यायें गौण रूप से होने पर भी बड़ी दिलचस्पी से उपन्यासो के कथानकों में गुथी हुई हैं। अपनी कला के चमत्कार से वर्मा जी ने इन्हें बड़ा रोचक और दिलचस्प बना देते है, दोनों पक्षों में जो कुछ कहा जा सकता है, वह भी चतुराई से पात्रों के कथोपकथनों द्वारा प्रस्तुत कर दिया जाता है।

"मृगनयनी" में जाति पाँति की संकीर्णता तथा तज्जनित जटिलताओं, कष्टों और अन्यायों पर प्रकाश डाला गया है। जाति-पाँति के ठेकेदार जिस बात के लिये बड़े व्यक्तियों की ओर उंगली नहीं उठा सकते, वह जब छोटे स्तर के व्यक्तियों में होते हैं, तो उन्हें भरपूर सज़ा देने में नहीं चूकते। समाज और धर्म के इन ठेकेदारों ने समाज को जितनी हानि पहुंचाई है, उतनी युद्धों ने नहीं।

'मृगनयनी' में अटल और लाखी—अहीर और गूजर जाँति-पांति बिरादरी की परवाह न कर विवाह सूत्र में बंधना चाहते हैं; राजा मानसिंह निम्न जाति की कन्या निन्नी से विवाह कर चुका है। उसके विवाह सम्बन्ध में लोक मत को कुछ टीका टिप्पणी करने का अधिकार नहीं है। पुजारी और ज्योतिषी, गांव वाले बिरादरी कोई कुछ नहीं कर सकता (समरथ को नहिं दोष गुसांई) लेकिन जब वही बात अटल और लाखी करना चाहते है, तो रूढ़िवादी समाज की नाक भौं चढ़ जाती हैं। 'मृगनयनी' का एक प्रसंग देखिये—

अटल पुजारी के पास चला गया। उसे आशा थी कि राजा का साला होने के कारण पुजारी अविलम्ब मुहूर्त शोध देगा। पुजारी ने अटल के अनुरोध पर तुरन्त नाहीं कर दी—

चित्र कलावती के नेत्रों में आंसू ले आता था; परन्तु उस रिक्त स्थान में मानसिंह का चित्र विविध रूपों में आ जाता था। विवाह में अनेक सामाजिक बाधाएँ थी। इन रूढ़ियों का उलंघन करने में साहस की आवश्यकता थी। अन्त में मानसिंह हिम्मत कर के विधवा विवाह करने का निश्चय करता है। समाज और धर्म के रूढ़ि बन्धन का खण्डन करता है। गोड़ों में विधवा विवाह की प्रथा है, राज गोड़ों में नहीं, यह वह जानता है परन्तु साहस पूर्वक वह ढकोसलों को तोड़ता है। बरसी पटा भी एक मास का ही करता है; इसके पश्चात् विधवा विवाह की रसम पूरी हो जाती है।

'लगन' में दहेज समस्या को उभारा गया है। देवसिंह के पिता शिवू ने बरौल के बादल चौधरी के यहां उनकी पुत्री रामा से अपने पुत्र का विवाह किया था। विवाह के समय रामा के पिता ने दहेज में सौ भैंसें देने का वचन दिया था, जिसे न पूर्ण करने पर देवसिंह के पिता ने अपने समधी बरौल के चौधरी को विवाह के समय ही गाली गलौज करके अपने इस नए सम्बन्ध में वैमनस्य का बीज बो लिया था, बहू की बिदा भी नहीं कराई थी और घोषणा की थी कि वे पुत्र द्वितीय विवाह सम्पन्न करेंगे। देवसिंह और रामा की प्रेम-साधना ने केवल पति पत्नी की आकांक्षा ही पूर्ण नहीं की प्रत्युत बरौल और बाटरा के दोनों प्रसिद्ध घरानों को उस संघर्ष में पड़ने से बचा लिया जिसमे उनका सर्वनाश होना अवश्यम्भावी था। इस उपन्यास में जहां दहेज से उत्पन्न वैमनस्य, कटुता, गाली गलौज सम्बन्धी मूर्खता पर प्रकाश डाला गया है, वहां श्वसुर और बहू की मर्यादा का आदर्श चरित्र भी अङ्कित किया गया है।

कहीं २ साम्प्रदायिक समस्या को भी स्पर्श किया है। 'मृगनयनी में सिकन्दर ने नरवर का क़िला जीत लिया, परन्तु क्रोध बढ़ गया। वह क़िले के भीतर गया और चारों ओर चक्कर काट कर निरीक्षण किया। उसमें कुछ शैव और वैष्णव मंदिर थे, प्रचुर संख्या में जैन मंदिर। जैन मूर्तियाँ शान्त रस की अवतार, शान्ति प्रदान करने

वाली थी। साम्प्रदायिक विद्वेष एवं उत्तेजना में भर कर सिकन्दर ने सौंदर्य और शान्ति के उन प्रतीकों को चूर चूर कर दिया। 'झांसी की रानी' में वर्मा जी ने हिन्दू-मुसलिम एकता से पोषित राष्ट्रीयता का चित्रण किया है। इस उपन्यास में राष्ट्रीयता की भावनाएँ प्रधान हैं। उस समय साम्प्रदायिक भावनाएँ इतनी संकुचित नहीं थीं - नवाब का प्रधान मन्त्री हिन्दू होता था। जो कट्टरता आज हमें दिखाई दे रही है, वह अधिक पुरानी नहीं है। लक्ष्मीबाई यवन स्त्रियों के स्वाधीनता के पक्ष में है। ताजियों पर जो सनातनी प्राय देखी जाती है, लक्ष्मीबाई वह नहीं चाहती थी। वे हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के पक्ष में थीं और उसके लिये सतत उद्योग शीला रहीं। गांधी युग के समतावाद की एक झलक यहां मिल जाती है।

मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि

वर्माजी की उपन्यासकला की एक विशेषता यह है कि वे पात्रों के गहनतम स्थलों में पैठ कर मनोवैज्ञानिक गहराइयों से पात्रों का चरित्र-चित्रण करते हैं। उन्होंने मानव स्वभाव के उन केन्द्रों का अध्ययन किया है, जहां से उनके कार्य प्रारम्भ होते हैं। मानव-मन के विश्लेषण में जिस अध्ययन एवं विस्तृत अनुभव की अपेक्षा है, वह उनके पास प्रचुरता से है। नाना प्रकार के, भिन्न-भिन्न स्वभाव आदतों और वर्गों के पात्र पात्री उनके नेत्रों के सामने से गुजरे हैं। इन सब को गहराई से परख कर वर्माजी ने उनका चित्रण किया है। यही कारण है कि उनके पात्र कोरी कल्पना के पुतले न होकर भावना, बुद्धि, विवेक, बल, पराक्रम, संस्कृति और कला के प्रतीक हैं। उनमें वही मांस और रक्त है, जो हमारे शरीर में प्रवाहित होता है। उनमें अच्छाइयां हैं तो मानव चरित्र की दुर्बलताएँ भी हैं। अपने समस्त गुण दोषों के बावजूद उनके पात्र स्वस्थ, शरीरी और स्वाभाविक हैं।

स्थूल रूप से वर्माजी के उपन्यासों में पात्रो के अन्तःसंघर्ष की अपेक्षा घटनाओं का अधिक महत्व है, किन्तु यत्र तत्र पात्रों के चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक शैली का प्रयोग किया है। पात्रों के कार्य कलाप, मन्तव्य; अन्तरवृत्ति और सेक्स (Sex) भावनाओं का बड़ा गहरा चित्रण उपलब्ध है। वे परिस्थिति का ताना बाना इतना सूक्ष्म बुनते हैं कि उस वातावरण में पात्र सही रूप से प्रकट हो जाते हैं। पात्रों के इर्द गिर्द का वातावरण, पोशाक, रहन-सहन का ढङ्ग, वार्तालाप क्रिया कलाप मात्र से ही वे संतुष्ट नहीं हो जाते, उनके मनोव्यापारों, हृदय की उथल-पुथल, अन्तर्द्वन्द को भी प्रकट करते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास में भी मनोवैज्ञानिक अध्ययन होने के कारण पात्रों के रंग रूप जैसे निखर उठे हैं। वातावरण निर्माण वे पात्रों को उभारने संवारने में और सहायता दी है।

'कचनार' मे वर्मा जी मानव-स्वभाव की उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने में लगे हैं। इसमें मानसिंह, दिलीप और कचनार के चरित्रों की गहराइयों, भावों की गहनता, रुचियों की जटिलताओं के विश्लेषण मे मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि है। एक प्रकार से पूरा उपन्यास एक मनोवैज्ञानिक भित्ति पर खड़ा हुआ है—'दिलीप का सर की बड़ी चोट के कारण मौजूदा जीवन तथा घटनाओं को भूलकर नया विकास। वर्मा जी ने दिखाया है कि सर की चोट से कैसे स्मरण शक्ति लुप्त हो जाती है, फिर क्रमशः वह नए रूप में धीरे धीरे क्रमानुसार बच्चे की बुद्धि की तरह विकसित होती है। दूसरे युद्ध मे पुनः उसी स्थान पर चोट लगने से अचेत होकर पुनः विस्तृत जीवन स्मरण हो आता है। इस उपन्यास का आधार स्मरण-शक्ति सम्बन्धी मनोविज्ञान है। इस उपन्यास में मानसिंह और कलावती का भाभी-देवर का सम्बन्ध होने पर भी यौन आकर्षण, अन्त में विवाह में परिणत सेक्स की जटिलताओं पर प्रकाश डालता है। 'कचनार' वे चरित्र की गहराई उसके हृदय की पीड़ा और व्यथा-भार मानव स्वभाव की गुत्थियों पर प्रकाश डालता है।

'मृगनयनी' में निन्नी तथा लाखी के आन्तरिक जीवन का क्रमिक विकास, मामींगों के मनोभाव, लीलाएं, पुरान पन्थी, रूढ़िवादिता, समवयस्क युवतियों के आंतरिक इच्छाएँ, प्रेम का प्रभात, उल्हड़पन, उन्माद; बोधन पण्डित का अहं, ज्ञान का दम्भ, वाक्युद्ध के उत्पात का मूल, वासना का ताण्डव नट नटनियों का मनोविज्ञान शराबी विलासी वासना में उन्मत्त नसीरुद्दीन की वासना-तृप्ति जाति-पांति की संकुचितता तथा उसका विध्वंसात्मक स्वरूप, संगीत कला चित्रकारी की साधना—इन सभी के विवेचन में व्यक्ति और समाज के संघर्ष के साथ-साथ व्यक्ति और व्यक्ति की कशमकश, मनुष्य का अन्तर्द्वन्द मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर चित्रित हुए हैं। वर्मा जी ने सामन्ती युग तथा तत्कालीन नरेशों की सारी मानसिक क्रियाएं उधेड़ कर रख दी हैं। नायिकाओं का प्रेम निराशा, अतृप्तलालसा, विचारों में परस्पर पार्थक्य, सौतिया डाह को भी व्यक्त किया है।

'अचल मेरा कोई' मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। तीन प्रमुख पात्रों अचल, कुन्ती और सुधाकर को नाना मानसिक क्रिया-प्रक्रियाओं के ताने-बाने से कथानक की सृष्टि की है। इसमें मनुष्य, विशेषतः युवक युवतियों के मानस-उदधि में उत्पन्न होने वाली भावना तरंगों, हास, विलास, आकर्षण, रति, सन्देह, हावभावोंका, मानसिक संघर्ष का विश्लेषण है। अचल और कुन्ती भावुक हैं, अचल का मन सदैव असंख्य विचारों से परिपूर्ण रहता है। अचल के मन में रति-भाव का उदय तथा तत्सम्बन्धी मनोव्यापार कहीं कहीं अति भावुकता से भर गया है; कुछ प्रसंग काव्यमय हो गए है। एक उदाहरण लीजिये—

'साध साध कर, संभाल-संभालकर प्रेम करता रहूँगा, हृदय की गिनी गिनाई गतियों को राई रत्ती तौलते हुए वासना प्रसूनों को रेशम की पोटली में गांठ लगाकर बांधे हुये कामना-परिमल को, और मुट्ठी में कैद की हुई लालसा—सुगन्धि को थोड़ा थोड़ा करके कुन्ती पर

योछावर करता रहूंगा'—अपनी समस्या के हल पर अचल को बहुत तृप्ति हुई।'

अचल अत्यन्त विचार शील युवक है। जैनेन्द्र जी के पात्रों की तरह अपने में डूबकर अचल बाहरी वस्तुओं और पात्रों के सम्बन्ध में सोचता विचारता है। उसके समस्त मनोव्यापार बड़ी सचाई से कागज पर उतार कर रख दिये गये हैं। दो तत्त्वों में वर्मा जी जैनेन्द्र जी के सन्निकट आ जाते हैं—(१) दो चार प्रमुख पात्र चुनकर उनके अन्तर्द्वन्द्वों में बैठने की प्रवृत्ति (२) गांधीवाद के प्रति आस्था 'अचल मेरा कोई' उपन्यास में गांधीवाद के प्रबल संस्कारों और प्रेम भाव की जटिलताओं का मनोवैज्ञानिक निरूपण हुआ है।

वर्मा जी के उपन्यासों में जहाँ मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उभरा है, भारतीय नारी के अन्तःकरण का सहानुभूति पूर्ण मनःविश्लेषण मिलता है। यह गुण सामाजिक उपन्यासों, विशेषतः 'अचल मेरा-कोई' में पाया जाता है। 'लक्ष्मीबाई' में रानी लक्ष्मीबाई, जुही, काशी, मोतीबाई, 'मृगनयनी' में लाखी, निन्नी और कला; 'कचनार' में कचनार ललिता, मन्ना और कलावती, 'अचल मेरा कोई' में कुन्ती और निशा के चरित्र चित्रण में जहां मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि है, वहां उपन्यासकार की सहानुभूति भी मिली है।

आदर्श पात्रों को उभारने के लिये वर्मा जी ने ऐसे खल पात्रों की भी सृष्टि की है, जो मनुष्य की दुर्बलताएं चित्रित करते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ऐसे पात्रों का अस्तित्व अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि सत्य-असत्य, सुन्दर असुन्दर, शिव अशिव, परस्पर एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। 'मृगनयनी' में राखी और मृगनयनी के चरित्रों की उज्ज्वलता पिल्ली की अतृप्त वासना एवं भ्रष्टता, गुजरात के महमूद बघर्रा तथा मालवा सुलतान नसीरुद्दीन की विषय वासना तृप्ति दूसरी ओर अटल और मानसिंह की उज्ज्वलता परस्पर एक दूसरे के चरित्रों को उभारते हैं। 'कचनार' में कलावती और ललिता की दुर्ब-

लाएँ कचनार की पतिव्रता, निष्ठा, आत्मबलिदान और आदर्शात्मकता को ऊंचा उठाती है। दिलीप और मानसिंह के चरित्र सर्वथा विपरीत से है। दो और आदर्शों के चरितो में कैसा वैषम्य हो सकता है, यह स्पष्ट किया है। अचल मेरा कोई' मे भी ऐसे जोड़े आते हैं, जो परस्पर एक दूसरे के चारित्रिक गुणों को उजागर कर देते हैं जैसे अचल और सुधाकर: निशा और कुन्ती।

टैकनीक संबन्धी विशेषताएं

कथानक पक्ष—

वर्मा जी कथानक-निर्माण मे विशेष पटु हैं। ऐतिहासिक कथाओं के साथ अपने प्रत्येक उपन्यास मे रोचक प्रासंगिक कथाएं भी यत्र-तत्र जोड़ दी है। मूल कथानक पेड़ के मोटे तने की तरह सुदृढ़ रहता है और ये रोचक प्रासंगिक कथाएं मूल कथानक में जुड़ी रह कर दिलचस्पी बढ़ाती हैं और कथा प्रवाह को गतिशील रखती है।

मूल कथानको के निर्माण में आपने इतिहास का आधार लिया है। पृष्ठभूमि और वातावरण निर्माण के लिये देश काल और स्थिति का विशेष ध्यान रखा है। 'झाँसी की रानी' के मूल कथानक निर्माण में तथ्यों की खोज, इतिहास का अध्ययन एवं तत्सम्बन्धी तथ्यो का निरूपण हुआ है। वर्मा जी उपलब्ध इतिहासो, चरित्र सम्बन्धी पुस्तकों, व्यक्तियो, परम्पराओ, किंवदन्तियो, पुराने शिलालेखो, चित्रो, महलों खण्डहरो से अपने निष्कर्ष निकाल कर उनका उपयोग करते हैं। जिन कथा—भागो के विषय में इतिहास अस्पष्ट और धूमिल है, उनके विषय में विशेष सतर्कता बरती जाती है। उदाहरण के लिये वर्माजी 'झाँसी की रानी' के विषय मे की हुई ऐतिहासिक खोजो का विस्तृत ब्योरा पुस्तक के परिशिष्ट मे दे दिया गया है। मूल कथानक के साथ

उसकी सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक परिस्थितियों को चित्रित करने का विशेष ध्यान रखा गया है। प्रस्तावना मे प्रारम्भिक. इतिहास से तत्कालीन उपयोगी सामग्री दी गई है।

'मृगनयनी' मे मानसिंह तोमर को कथानक का आधार बनाया गया है। यद्यपि इसमें सन् १४८६ से १५१६ ई० तक के ग्वालियर के इतिहास को विवेचन का विषय बनाया गया है, तथापि तत्कालीन भारतीय राजनैतिक स्थिति पर भी छींटाकशी की है।

'कचनार' में धामोनी और सागर के पारस्परिक युद्धों से सम्बद्ध है। इसके मूल कथानक में.वर्मा जी ने स्वयं अनुसंधान किए हैं। इस में तत्कालीन (सन् १७६२ से १८०३) राजनैतिक, सामाजिक स्थिति एवं सामन्तीय जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इसमें प्रयुक्त सामग्री 'सागर गजेटियर', बुन्देलखण्ड का इतिहास और लाल कवि रचित 'छत्र प्रकाश' से लिये गये हैं।

वर्मा जी के कथानकों में प्रासंगिक कथाओ का सौन्दर्य है। ये छोटी छोटी कथाएँ मूल कथानक से संयुक्त कर दी गई है। इनमे तरह तरह की समस्याओं को उठाकर उनका समाधान किया जाता है। कहीं इनसे वातावरण चित्रित हुआ है, तो कहीं देश काल का ज्ञान कराया गया है। चरित्र चित्रण मे भी इनसे पर्याप्त सहायता मिली है। वर्मा जी की सफलता उनके संगुफन और तारतम्य मे है। एक घटना को दूसरी से, दूसरी से तीसरी, चौथी को संयुक्त कर एक सूत्रता और तारतम्य बनाये रखा जाता है। ये कथाएं परस्पर संयुक्त हैं।

'झांसी की रानी' में प्रासंगिक कथाओं से तत्कालिक परिस्थिति और चरित्र चित्रण में प्रचुर सहायता मिलती है। इनमें कुछ समस्याएँ भी उभारी गई हैं जैसे—'झांसी में अवर्ण हिन्दुओं द्वारा उठाई हुई जनेऊ की समस्या, नारायण शास्त्री की प्रेम कथा, सागरसिंह की वीर गाथा, गंगाधरराव द्वारा काशी में राजेन्द्र बाबू को पिटवाने की

घटना—ये तथा अन्य घटनाएँ प्रासंगिक होते हुए भी मूल कथानक को उभारती हैं। 'कचनार' में दलू तथा मन्ना की कथा, महलों का जीवन तथा कार्य, 'मृगनयनी' में लाखी और अटल का रोमानी सम्बन्ध; सुल्तान नसीरुद्दीन की पन्द्रह हजार बेगमों की कहानी, गुजरात के महमूद बघर्रा की आदतें, नटनी नटों के साहसपूर्ण कार्य, पिल्ली की मृत्यु—ये सभी घटनाएँ मनोरंजक होते हुए भी चरित्र और परिस्थिति पर प्रकाश डालती हैं।

'गढ़ कुण्डार' और 'विराटा की पद्मिनी' को हम वर्मा जी का प्रतिनिधि उपन्यास मान सकते हैं। इनमें कथा का गठन और विकास जिस सुचारु रूप में हुआ है, वह सुचारुता, प्रेमचन्द, प्रसाद, या निराला में नहीं मिलती। जहाँ प्रेमचन्द ने प्रभावैकता का ध्यान नहीं रखा है, वर्माजी सुगठित कथा को गिनाने में दक्ष रहे हैं। वे अपने कथानक में बहुत-सी नाटकीय परिस्थितियों का आयोजन कर उनके द्वारा चरित्र चित्रण भी करते जाते हैं और कौतूहल की भी वृद्धि करते जाते हैं। उनके उपन्यासों में किसी घटना का अचानक प्रवेश नहीं हो गया है, बल्कि वह इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न कर देते हैं कि उसमें बीज से वृक्ष की भाँति कथा का पूरा विकास क्रमबद्ध रूप में होता चला जाता है। किसी असाधारण घटना का समावेश करने के लिए उन्हें कथा-प्रवाह के बीच रुककर सफाई देने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वरन वह घटना कथा-प्रवाह में स्वाभाविक क्रम के रूप में आती है [१]।"

संक्षेप में, वर्माजी कहानी कहने में पटु हैं। कथावस्तु में जटिलता नहीं रहती। सरल, सुबोध शैली में, नाना समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए, वे द्रुतिगति से घटनाओं का वर्णन करते चलते हैं। वे सम्पूर्ण प्लाट पहिले ही सोच लेते हैं। मन में कथावस्तु की स्पष्टता के कारण उनमें कोई जटिलता नहीं आती। जो समस्याएँ उठाई जाती हैं, उनके लिए आप पात्रों और परिस्थितियों का निर्माण करते

---

१ श्री ज्ञानचन्द जैन।

चलते हैं। आपका वस्तु संगठन में अनावश्यक विस्तार नहीं है। कहीं-कहीं इतिहास की घटनाओं का वर्णन अवश्य है, किन्तु उसे निकाल देने पर नीरसता कहीं नहीं है। छोटी-छोटी प्रासंगिक कथाओं को जोड़कर वे रोचकता का समावेश कर देते हैं। कथा-विकास मे जिज्ञासा और रोचकता का विशेष ध्यान रखते हैं। यही कारण है कि आकार में बड़े-बड़े होने पर भी पाठक की रुचि अन्त तक बनी रहती है। अनेक कथासूत्रों को पकड़े रख कर प्रत्येक में निजी उत्सुकता बनाये रखना वर्माजी की कला का सौन्दर्य है।

प्रमाणिक ऐतिहासिक कथानक होने पर भी वर्माजी के उपन्यासों मे मौलिकता का गुण विद्यमान हैं। उनके पात्र परिस्थितियाँ, प्रासंगिक कथायें किसी अन्य लेखक से उधार ली हुई नहीं हैं। मूल आधार पर अनुसन्धान कर वे पात्रों तथा घटनाओं का संगुफन स्वयं करते हैं; रेखा चित्रों में उन्हीं की तूलिका के रंग है।

श्री हरस्वरूप माथुर एम० ए० के इस कथन मे सत्यता है, 'उनकी कथावस्तु मौलिक होती है, साथ ही शैली की भी मौलिकता है; कथा विकास स्वाभाविक एक कलात्मक है; उन्होंने आकस्मिक घटनाओं का सहारा नहीं लिया हैं ... स्वाभाविक परिस्थितियों की योजना कर उपन्यासोकला के ऊँचे स्तर का आदर्श प्रस्तुत किया है।"

चरित्र-चित्रण

वर्मा जी के प्रमुख पात्र तो इतिहास के व्यक्ति हैं, किन्तु उनके साथ आने वाले प्रासंगिक पात्र स्वयं उनके द्वारा विनिर्मित हैं। यथार्थवादी दृष्टिकोण और विस्तृत अनुभव होने के कारण उनके चरित्र-चित्रण में सजीवता है। उनके पात्रों का पृथक ही अस्तित्व है अपना पृथक् (Individual Personality) व्यक्तित्व है। अपनी आदतों, स्वभाव, मानसिक संघर्षो, आदर्शों में वे पृथ क् पृथक हैं।

मनुष्यों को सूक्ष्म दृष्टि से देख कर का वर्मा जी ने सचाई और स्वाभाविकता का विशेष ध्यान रखा है। स्वच्छन्द गति और स्वतंत्र व्यक्तित्व के कारण ये पात्र जीवन के स्पन्दन से परिपूर्ण हैं।

वर्मा जी ने पात्रों की बाह्य आकृति, वेशभूषा, रहन-सहन, व्यवहार, कार्य इत्यादि को गहराई से देखा और चित्रित किया है। उनके पात्रों के रेखाचित्र स्पष्ट हैं। कहीं कहीं तो ब्रुश के दो चार स्पर्शों से ही रेखा चित्र बोल उठे हैं। 'मृगनयनी' के रेखा चित्र देखिए कैसे स्पष्ट और संक्षिप्त हैं :—

'वे दोनों (निन्नी और लाखी) समवयस्क थीं—आयु लगभग पन्द्रह-सोलह वर्ष परन्तु निन्नी बलिष्ट और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेरी। निन्नी गोबर के सत्कार से डरना नहीं चाहती थी।'

'अटल हट्टा कट्टा युवक था। आंमें भीग चुकी थीं। सिर के बाल लम्बे थे। इसलिए सारी आकृति में भीमता आ गई थी। कई साल के कठोर जंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ और लम्बा कर दिया था। अपनी बहिन निन्नी को सुखपूर्वक और सुरक्षित रखने में उसने कोई कसर नहीं लगाई थी। माँ बाप मार डाले थे, अब घर में केवल वे दो ही बचे थे।'

'मानसिंह कनात का पर्दा हटा कर घुस गया। दुलहिन घूँघट खोले थी—रंग गेहुंए से जरा ज्यादा गोर, आँखें बड़ी, बरौनियां लम्बी, नाक सीधी, चेहरा गोल। एक सहेली खरे गोरे रंग की थी बहुत सुन्दर ; दूसरी जरा सांवले रंग की, आंखें बड़ी परन्तु नाक, कुछ चपटी, नथने फूले हुए। दोनों खटोलिया गोंड़।' —कचनार

तुलनात्मक चरित्र-चित्रण में भी वर्मा जी को प्रचुर सफलता मिली है। 'कचनार' में कलावती और कचनार ; 'अचल मेरा कोई' में निशा और कुन्ती, 'मृगनयनी' में लाखी और निन्नी के तुलनात्मक चरित्र अध्ययन प्रस्तुत किए गए हैं। 'कचनार' का उदाहरण लीजिए—

'दुलैयाजू का स्वर सारंगी सा मीठा है, कचनार का कण्ठ मीठा
होते हुए भी चिनौती-सा देता हुआ। दुलैयाजू कमल हैं, कचनार
कँटीला गुलाब। जिस समय दुलैयाजू को हल्दी लगाई गई, मुखड़ा
सूरजमुखी सा लगता था। उनकी आँखों में मद था, कचनार की
आंखें ओले-सी सफेद और ठण्डी। उनकी मुसकान मे ओठों पर
चाँदनी-सी खिल जाती है, कचनार की मुसकान में ओठ व्यंग्य-सा
पैदा करते हैं। दुलैयाजू की एक गति, एक मरोड़ न जाने कितनी
गुदगुदी पैदा कर देता है।-कचनार जब चलती है, ऐसा जान पड़ता
है कि किसी मठ की योगिन है। बाल दोनों के बिलकुल काले और
रेशम जैसे चिकने हैं, दोनों से कनक की किरणें फूटती हैं। दोनों के
शरीर में सम्मोहन जादू भरा-सा है। दोनों बहुत सलोनी हैं। दूलै-
याजू को देखने और बातें करते कभी जी नहीं अघाता। अत्यन्त
सलोनी है। घूँघट उघाड़ते ही ऐसा लगता है, जैसे केसर बिखेर दी
हो। कचनार को देखने पर ऐसा जान पड़ता है जैसे चौक पूर
दिया हो।'

चरित्र चित्रण में प्रायः वर्मा जी अभिनयात्मक प्रणाली का
अनुसरण करते हैं। अभिनयात्मक प्रणाली क्या है? वे हमारे समक्ष
पात्रों को कार्य करते, बोलते चालते, झगड़ते, आखेट-या युद्ध करते,
संगीत या कला साधना में तन्मय खड़े कर देते हैं। इन पात्रों में
निरन्तर गतिशीलता रहती है। इनके कथोपकथनो तथा क्रियाकलाप
से हम सहज ही उनके चरित्रगत गुणों अथवा त्रुटियों का ज्ञान कर
लेते हैं। इनमें अपनी ओर से जोड़ने के लिये कुछ नहीं रह जाता।
जैसे नाटक में रंगभूमि पर पात्रों के क्रियाकलापों से हम कुछ निष्कर्षों
पर पहुँचते हैं, उसी प्रकार इनके उपन्यासों के पात्रों के कार्यकलाप
और वार्तालाप द्वारा चरित्र प्रकट होता है। उपन्यासकार सर्वथा
तटस्थ रहता है। इस शैली का विकास वर्मा जी के नाटकों में विशेष
रूप से देखा जा सकता है।

'वर्मा जी के चरित्र-चित्रण की दूसरी विधि मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की है। उनकी मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि सर्वत्र प्रकट होती है स्वयं पात्रों के चरित्रों को तोड़ फोड़ कर कैमिस्ट की तरह विश्लेषण कर हमारे सामने उपस्थित कर देते हैं। किसी पात्र के चरित्र के विषय में स्वयं उनका क्या मत है, वे उसे कैसा अभिव्यक्ति करेंगे, किस गुण अथवा त्रुटि को पात्र के कार्यकलाप अथवा वार्तालाप द्वारा दिखाएँगे यह वे संक्षेप में स्वयं निर्देश कर देते हैं। चरित्र का यह विश्लेषण इतिहास सम्मत होता है। 'कचनार' के कुछ उदाहरण देखिए।

'''रात और कलावती में कुछ बेतकल्लुफी बढ़ी, परन्तु दिलीप सिंह जिस मुक्त व्यवहार, अत्यन्त प्रेम, इठलाहट और अठखेलियों का आकांक्षी था, वह उसको नहीं मिल रहा था।'

''परन्तु उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपट प्रिय था।' —मृगनयनी

स्वर, उसका स्वाभाविक मधुरता से भरा हुआ था और कान ग्रहणशील थे, बुद्धि प्रखर।' —मृगनयनी

उनके पात्र दोनों वर्ग के हैं—स्थिर और गतिशील। उनका आकर्षण गतिशील चरित्र हैं, जो निरन्तर विकसित होते चलते हैं।

कथोपकथन:—

वर्मा जी ने जिस उपन्यास शैली को ग्रहण किया है, उसमें कथोपकथन का विशेष हाथ है। प्रायः घटना प्रधान उपन्यासों में उपन्यासकार लम्बे २ ऊबा देने वाले वर्णन करने लगते हैं। वर्मा जी अपने पात्रों की चरित्रिक विशेषताओं का व्यक्त करने वाले छोटे छोटे कथोपकथन का बड़ा कुशल उपयोग करते हैं। 'झांसी की रानी' के कथोपकथन छोटे छोटे और सजीव हैं। सर्वत्र स्वभाविकता एवं यथार्थवादिता का ध्यान रखा गया है।

'वर्मा जी के पात्रों के कथोपकथन, चरित्रचित्रण में अत्यन्त सहायक हुए हैं। जैसे व्यक्ति है, उसी प्रकार की बातचीत है। कथोपकथन

लम्बे नहीं हैं। कहीं कहीं विस्तृत होने पर भी, सरल स्पष्ट एवं सजीव हैं। उनमें पात्रों के अनुकूल स्वाभाविकता, उपयुक्तता और चुस्ती है। भाषा कथोपकथन को सारगर्भित करने के योग्य है। ग्रामीण ग्रामीणों, स्त्रियां स्त्रियां, अंग्रेज अंग्रेजों की तरह अपनी २ भाषा में बात करते दिखाई देते हैं। बातचीत में व्यर्थ तथा सारहीन अंश प्रायः नहीं के बराबर हैं; कहीं २ व्यंग्य का चमत्कार भी बहुत अच्छा है।' १

कथोपकथनों में वीर और शृङ्गार रस का परिपाक बहुत सुन्दर हुआ है। कभी व्यंग्य है, तो कहीं मीठी चुटकी ली गई है। मुहाविरे भी कुशलता से फिट किए गए हैं। वीर रस की बातचीत प्रायः ओज-पूर्ण हैं। कहीं दार्शनिकता का भी पुट है। सजीव स्वाभाविक और व्यंगपूर्ण कथोपकथन वर्मा जी के उपन्यासों का एक आकर्षण हैं।

वर्मा जी के कथोपकथन स्वभाविक एवं अभिनयात्मक प्रणाली के होते हैं। स्वभाविकता की रक्षा के हेतु वे पात्रों के गुण, कर्म स्वभाव और चरित्रों के अनुकूल भाषा एवं भाव का प्रयोग करते हैं। प्रत्येक पात्र के चरित्र के विषय में उसके कथन को सुनकर सहज ही उसका मानसिक चित्र खींचा जा सकता है।

जो पात्र जैसा है, वैसी ही भाषा-भाव का प्रयोग करता है। मुसलमान पात्रों के विचार एवं भाषा उर्दू है, वे काफी विलासी और उत्तेजक स्वभाव के हैं। धर्म सम्बन्धी विवेचन और गूढ़ तात्त्विक आलोचना भी छोटे छोटे कथोपकथनों में नित्य प्रति की बातचीत की शैली में अभिव्यक्त की गई है। व्याख्यान का रूप कहीं भी नहीं लिया गया है।

कथोपकथनों द्वारा वर्मा जी नाटकीय परिस्थिति एवं अभिनयात्मक तत्त्वों का प्रादुर्भाव करते हैं। सरल, स्वभाविक चलती भाषा

---

१ रामलाल सावल एम० ए०।

वातावरण:—

वातावरण की सृष्टि में वर्माजी ने विशेष ध्यान दिया है। वातावरण का सम्बन्ध रस से है। मानव के राग द्वेष, प्रेम, करुणा, हर्ष, विषाद, क्रोध, घृणा, ईर्ष्या आदि मनोविकारों के चित्रण के द्वारा स्थान-स्थान पर वर्माजी ने भावात्मक चित्र प्रस्तुत किये हैं। अपने पात्रों के चरित्रों के अनुकूल वातावरण निर्माण का विशेष ध्यान रखा है।

ऐतिहासिक पात्र होने के कारण देश काल और तत्कालीन समाज का विशेष रूप से ध्यान रखा है। देश के चित्रण के अन्तर्गत अन्य स्थान, भौगोलिक स्थिति, गढ़, किले, नगर के समीप की नदियां, वृक्ष, बुर्जों, फाटकों का सुचारु वर्णन किया है। बुन्देलखण्ड, झांसी, नरवर, ग्वालियर इत्यादि के भू भागों के वर्णन बहुत विस्तृत रहे हैं। धर्म प्राण देश होने के कारण वर्माजी ने अतीत भारत के यज्ञ, श्राद्ध, पूजा-पाठ, रूढ़ियां तथा धार्मिक अनुष्ठानों उत्सवों का सफल वर्णन किया है। उनके उपन्यासों में प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन प्रचुरता से मिलते हैं। प्राचीन सामन्तीय-जीवन, युद्ध, आखेट, प्रेम सौन्दर्य और वासना-लोलुपता ने भिन्न-भिन्न वातावरण उत्पन्न करने को विशेष ध्यान दिया है। आपके अभिनय संगीत, कला, नृत्य, आखेट, युद्ध आदि घटनाओं के सजीव चित्रों के वातावरण बड़े सफल रहे हैं।

वर्माजी ने प्रकृति के अञ्चल में अपने कुछ पात्रों को खड़ा करके वास्तविक ग्रामीण वातावरण उपस्थित किया है। आगे जिस घटना को लाना है, उसके लिए वे पहले से ही प्रकृति के सुखद या विषाद-पूर्ण वर्णन द्वारा पूर्व भूमिका तैयार करते हैं। उससे स्वाभाविकता उत्पन्न होती है। उपयुक्त वातावरण में सँजोकर उन्होंने अपने पात्रों की प्राण प्रतिष्ठा की है।

शैली:—

वर्माजी की उपन्यास शैली वर्णात्मक घटना प्रधान है। एक के पश्चात् दूसरी, तीसरी-अनेक घटनाएँ निरन्तर चलती रहती हैं और पाठक का मन उलझाये रहती है। वर्णात्मक शैली मे स्वयं बहुत-सी बातें कहने (Comment) की भी सुविधा रहती है। इन वर्णनों मे आखेट, युद्ध, प्राकृतिक दृश्य, प्रेम-प्रसंग तथा सामन्तो की कला साधना के वर्णन चित्रोपम हैं। गढ़, किलों, नहर, महल, मन्दिरों आदि के वर्णनों से ऐसा प्रतीत होता है, यहाँ जाकर एक एक वस्तु देखकर सावधानी से लिखे गए हैं।

वर्णात्मक शैली में कथोपकथन का मणि कांचन सहयोग मिलने से स्वाभाविकता आगई है और पात्रो की चरित्रगत विशिष्टताओं को भी खिलने का अच्छा अवसर मिला है। कहीं-कहीं वर्माजी इतिहास के शुष्क लोक मे विचरण करने लगते हैं, जिससे पाठक उकता जाता है। पर ऐसे स्थल पर अधिक नहीं है। शीघ्र ही उसे प्रेम, वीरता साहस के भावुकता पूर्ण सरस स्थल या स्वाभाविक कथोपकथन प्राप्त हो जाते हैं।

आन्तरिक उथल पुथल और मनः संघर्ष की अभिव्यक्ति मे कलाकार के व्यक्तित्व की अमिट छाप मिलती है इसी में वे आदर्श की ओर संकेत भी कर देते हैं।

नाटकीय वातावरण उपस्थित कर देने की अद्भुत सामर्थ्य वर्माजी की लेखनी है। पात्रों की बातचीत इतनी सजीव तथा स्वाभाविक होती है कि सम्पूर्ण चित्र रंगमंच पर अभिनय होने वाले नाटक की तरह हमारे मनः नेत्रों के सम्मुख आ जाता है।

वर्माजी ने कई प्रकार की शैली का प्रयोग किया है जैसे--कथोपकथन, प्रभाव, भावुकतापूर्ण वर्णात्मक, एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व्यापकात्मक, दार्शनिक गुत्थियों से परिपूर्ण, हास्य व्यंग्यमय। सब से सफल अभिनयात्मक या नाटकीय शैली में रहे हैं।

वर्मा जी की शैली के सम्बन्ध में श्री राजेन्द्रसिंह गौड़ एम० ए० की सम्मति मान्य है। आप लिखते हैं:—'वर्मा जी की शैली दो प्रकार की है—(१) वर्णनात्मक (इसके अन्तर्गत स्थानों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वातावरण तथा कथावस्तु का निर्वाह आ जाता है) (२) भावात्मक (पात्रों का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व और हृदयाति इच्छाएं इत्यादि)। उनकी इन दोनों प्रकार की शैलियों में शब्द चयन शिष्ट और संयत है। वाक्य छोटे और अर्थ पूर्ण, पर कहीं कहीं वे शिथिल हो गये हैं। उनके वाक्य विन्यास में प्रौढ़ता नहीं है।

अपनी वर्णनात्मक शैली में उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता से भी काम लिया है। इस प्रकार उसमें सब कुछ है पर तंग नहीं है। उनकी भावात्मक शैली अवश्य प्रवाह पूर्ण और आकर्षक है, पर उपमाओं के प्रयोग के कारण कहीं कहीं उसमें बाधा भी पड़ी है।

उनका प्राकृतिक चित्रण बहुत ही अनूठा और प्रभावोत्पादक है। अपने वातावरण का चित्रण भी वे बड़े कौशल से करते हैं और उनका संश्लिष्ट चित्र उपस्थित करते हैं।

इसी प्रकार उनका मानवीय आकृतियों और व्यापारों का चित्रण भी प्रभावोत्पादकता से परिपूर्ण है।'

"युद्ध के वर्णनों की शैली में एक अद्भुत चमत्कार आ गया है। ये वर्णन पढ़कर ऐसा अनुमान होने लगता है मानो प्रत्येक कार्य में गति है। जिस प्रकार चित्रकला में गति चित्र होते हैं, उसी प्रकार साहित्य में भी वर्मा जी ने गति चित्र उपस्थित करने का प्रयत्न किया है। प्रायः दो चित्र एक साथ चलते हैं, जो एक दूसरे की गति में सहायक होते हैं।"*

जहां जहां भावुक स्थलों का प्रतिपादन आया है, वर्मा जी की शैली सरस हो उठी है। वह हृदय को स्पर्श करती है। इनकी सरसता से हम आत्म विभोर हो उठते हैं।

---

* श्री श्याम जोशी एम० ए०

भाषा:—

वर्मा जी की भाषा सरल, सरस, और प्रवाहमयी है। भाषा पर उन्हें असाधारण अधिकार है। बिना किसी मानसिक श्रम के भावों तथा नाना घटनाओं से उत्पन्न परिस्थितियों के वर्णन पढ़ते हुये पाठक उनके उपन्यास—संसार में बहा चला जाता है। यहां साहित्यिक जटिलता, दुरूहता या अधिक अलंकारों से उत्पन्न कठिनता नहीं है, हृदय वीणा की मधुर झंकार है।

एक आलोचक के शब्दों में, 'वर्मा जी की भाषा कथावस्तु के अनुकूल बहुत स्वभाविक और प्रवाहमयी है। लोच चाहे उतना नहीं पर दिलचस्पी उपन्यास पढ़ने में बनी रहती है। ग्रामीण और स्थानीय शब्दों के प्रयोग में वर्मा जी हिचकिचाते नहीं' 'भाषा को समृद्ध बनाने का उनका प्रयास वांछनीय है, पर कहीं-कहीं भाषा बिल्कुल हिन्दुस्तानी हो जाती है, जिसे आजकल साहित्यिक नहीं चाहते। जैसे—'राजा ने इस तर्क पर जरा जोर किया'; भारतीय संस्कृति देव और नाचीज है।' आपकी उपमाएँ उपन्यास में चमत्कार कर देती हैं।

'मृगनयनी' में आपने नई तरह की उपमाओं का प्रयोग यत्र तत्र किया है, जो हास्य उत्पन्न करती हैं जैसे—

बघर्रा ने खाना शुरू किया''''

'क्या है यह ?' बघर्रा ने पूछा जैसे कोई पेड़ टूट कर गिरा हो।

'लाओ इधर' बघर्रा ने पाव भर कर एक ग्रास मुंह में डालते हुए मिठास के साथ कहा—जैसी पेड़ की डाल टूट पड़ी हो।

....

'बहुत खूब ! बघर्रा के मुँह से निकला, जैसे किसी पहाड़ पर चट्टान टूट कर लुढ़का हो।

....

पिल्ली के कानों को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे किसी बड़े हौज में भैंसा कूदा हो।

बारीक स्वर में बोली, 'सरकार, मांडू के पास के एक जंगल के रहने वाले हैं, हमलोग।'

'कहाँ जा रहे हो तुम ?' जैसे कोई चट्टान फटी हो, 'सरकार मेवाड़ की तरफ।'

'क्यों ?' जैसे लोहे के दो गोले आपस में टकरा गये हों

....

लाखी के रूखे होठों पर मुसकान आई जैसे गरमियों के सूखे नाले में पहली छिछली वर्षा की पतली धार आई हो।'

....

वर्मा जी के वर्णन शुष्क इतिहासकार के वर्णन न होकर कवि हृदय से निस्तृत कल्पना और भावुकता के स्पर्श से रंगीन भावपूर्ण वर्णन हैं। नसीरुद्दीन के जल विहार की सूक्ष्मता एवं नाटकीयता देखिए —

"जल विहार के विस्तृत क्षेत्र में कनातों की आड़ें लगा दी गईं एक ओर लहराने वाली झील की नीली जलराशि, दूसरी ओर कनातों के भीतर रंग बिरंगे बारीक वस्त्रों और झिलमिलाते अलंकारों से सजी हुई वे अप्सरायें। टिड्डीदल की तरह उमड़ रही थीं, अन्तर उनमें और टिड्डियों में इतना ही था कि टिड्डियां एक ही रंग की होती हैं। बरसात की तितलियाँ जैसी, परन्तु बरसात में एक ही स्थान पर इतनी तितलियाँ इकट्ठी नहीं दिखलाई पड़ती। सब हंसती मुस्कराती बातें कर रही थीं। सब अपने वस्त्रों को लहरा फहरा रही थीं, सब अपने यौवन का प्रदर्शन कर रही थीं ''''— ।"

भाषा पर पूर्ण अधिकार होने के कारण वर्मा जी हर प्रकार की भावव्यञ्जना के लिए शब्द चयन कर लेते हैं—सरस साहित्यिक, ग्रामीण, उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी, तथा चलती हिन्दी। अपना भाव शुद्ध रूप में अभिव्यक्त करने की ओर उनकी प्रवृत्ति है। जहां वे जैसी आवश्यकता समझते हैं, वैसी ही शब्दावलि का प्रयोग करने लगते

है। उनके शब्द भण्डार में ठेठ साहित्यिक हिन्दी, संस्कृत, उर्दू-फारसी और चलती हिन्दी का वृहत् भण्डार है। बुन्देलखण्डी स्थानीय शब्दों का भी प्रयोग किया है। साधारण पाठक से लेकर उच्चकोटि के विद्वान उनसे रस खींच सकते हैं।

हिन्दी के विद्वानों का उर्दू के प्रति विरोध ही रहा है किन्तु वर्मा जी के कुछ पात्र मुसलिम राजा, नवाब, अधिपति, शासक हैं। मुसलिम वातावरण तथा वार्त्तालाप प्रस्तुत करने के लिये वर्मा जी ने उर्दू फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है। स्वाभाविकता की रक्षा एवं यथार्थवाद की प्रतिष्ठा की दृष्टि से यह उचित प्रतीत होता है। उनकी दृष्टि हिन्दी के शब्द भण्डार में प्रचलित उर्दू के शब्दों को नीर क्षीर की तरह मिश्रित कर देता है। मुसलिम पात्र वही उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी बोलते हैं, जो साधारण रूप से प्रत्येक व्यक्ति समझ सकता है।

जहां उर्दू-फारसी का प्रयोग है, वहां तत्सम संस्कृत शब्दों का भी ऐसा प्रयोग किया है, जो सहज ही बोध गम्य है। जो पात्र सुशिक्षित हैं, वे संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं। भिन्न भिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तरों के अनुकूल वे भाषा में उचित परिवर्तन करते रहते हैं।* ग्रामीण तथा निम्न वर्ग के अशिक्षित व्यक्ति साधारण, चलती हुई प्रचलित भाषा का प्रयोग करते हैं, जिसमें स्थानीय (Local) शब्दों का भी प्रयोग है।

श्री रामखेलावन चौधरी एवं श्री लक्ष्मीनारायण टण्डन के विचार देखिए—'वर्मा जी हर एक बात नपी-तुली भाषा में लिखते हैं, व्यर्थ की तूल नहीं बढ़ाते। उनकी भाषा में एक प्रकार की रूक्षता है, प्रसाद की तरह सरस नहीं। संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का प्रयोग

* श्री वृन्दावनलाल वर्मा की भाषा का आदर्श बहुत कुछ उनके पात्रों के सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्तर के आधार पर बना है।"

स्थानीय शब्दों के प्रयोग के साथ हुआ है, भाषा व्यवहारिक है, शुद्ध साहित्यिक नहीं। प्रेमचन्द की अपेक्षा उनकी शैली का स्थिर रूप है।'

उपर्युक्त मत से सहमत नहीं हुआ जा सकेगा। उन पर रूक्षता का जो अभियोग लगाया है, वह उचित नहीं है। कारण, वे जैसी परिस्थिति और जैसा पात्र होता है, उसके अनुकूल ही भाषा और शैली का प्रयोग चलता है। मुसलमान पात्र और वातावरण आने पर वे ऐतिहासिक सत्यों का उद्घाटन करने लगते हैं। ऐतिहासिक सत्यों के निर्देशन में कल्पना और भावुकता से काम नहीं लिया जा सकता। वस्तुत: भाषा के सरलता एवं बोधगम्यता बनी रहती है। भावुक तथा प्रेम सम्बन्धी स्थलों में सरसता के स्पर्श हैं।

उनकी भाषा का अंतिम गुण मितव्ययता है। वे व्यर्थ के शब्दाडम्बर से दूर रहते हैं और कम से कम शब्द लेकर अधिक से व्यक्त करने के आदी हैं। जिन दृश्यों या प्रसंगों में उनका जी नहीं रमा है उन्हें उन्होंने दो चार पंक्तियों में ही समाप्त कर दिया है। इसके विपरीत प्राकृतिक दृश्यों एवं शिकार के वर्णनों में कमाल दिखाया है। इनमें भाषा का सौन्दर्य एवं सूक्ष्म दर्शन दर्शनीय है। आपके वाक्य छोटे-छोटे होते है। चित्रकार की तूलिका जैसे स्पर्शों (Touches) से वे अपने चित्र खींचते जाते हैं।

वर्मा जी के उपन्यासों की त्रुटियां

१—वर्तमान जीवन चित्रों का अभाव :—

जहाँ प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, निराला आदि ने वर्तमान जीवन तथा समस्याओं को चित्रित कर सामाजिक जीवन की बहुमुखी आलोचना की है, वर्मा जी के उपन्यासों में वर्तमान जीवन के चित्रों का

प्रभाव मिलता है। उनके उपन्यासों का वातावरण हमें बीते युग में ले जाता है और हम राजपूती शक्ति की बुझती हुई लौ के चित्र देखते हैं। उनकी सहानुभूति ने प्राचीन भग्नावशेषों का चक्कर काटा है। यदि उनके उपन्यासों में वर्तमान समय के चरित्र आये भी हैं, तो वे प्राचीन वैभव की छाया मात्र हैं।[१]

२—आन्तरिक जीवन के विश्लेषण की कमी :—

श्री वृन्दावनलाल वर्मा केवल अच्छे कथा लेखक हैं। कथा कहने और उसे सुरुचिपूर्ण ढङ्ग से रोचक बनाने में वे सिद्धहस्त हैं। मानव-जीवन के विभिन्न पहलुओं, समाज की अनेक गुत्थियों तथा प्रेम के अतिरिक्त अन्य अनुभूतियों को उन्होंने विवेचना का विषय बहुत कम बनाया है। वे जीवन की विवेचना नहीं करते; जीवन-संघर्षों की छाप नहीं दिखाई देती। जैनेन्द्र ने उनकी अपेक्षा मानव मन की निगूढ़तम गुत्थियों को सुलझाने का अपेक्षाकृत सफल प्रयत्न किया है।

३—ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से उत्पन्न शुष्कता :—

वर्मा जी ने ऐतिहासिक वातावरण चित्रण में बहुत खोजबीन की है। अपना समस्त ऐतिहासिक ज्ञान उपन्यास के कलेवर में उड़ेल देने का प्रयत्न किया है। इसलिये आपके कुछ उपन्यासों का ऐतिहासिक मूल्य होते हुए भी औपन्यासिक मूल्य कम हो गया है। कहीं कहीं वे स्थानीय राजनीति के साथ साथ तत्कालीन भारतीय सामाजिक और राजनैतिक दशा का ज्ञान भली भाँति कराने में भ्रान्ति कर गए हैं।

---

१ श्री ज्ञानचन्द जैन।

४—अनावश्यक विस्तार :—

इतिहास एक विशाल समुद्र है। अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्मा जी ने अनावश्यक विस्तार कर दिया है। सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों को स्पष्ट करने, प्राकृतिक दृश्यों के विस्तार खण्डखण्डन, धार्मिक वादविवादों में उपन्यासों का आकार बहुत बढ़ गया है। 'झांसी की रानी' में कितने ही स्थानों को कोनेन की गोली की तरह निगल कर पढ़ना पड़ता है और कथासूत्र टूटने सा लगता है। 'मृगनयनी' में संगीत कला, रूढ़िगत और उदार धर्म, शैव और वैष्णव भेद भाव के चित्रण में पाठक को कोई रुचि नहीं प्रतीत होती।

५—कथा विकास में त्रुटियां :—

बड़ा कथानक तथा जीवन का विशद चित्र अंकित करने के लोभ में वर्मा जी घटनाओं का वर्णन तेजी से करते चलते हैं। कहीं कहीं बिना पूर्व संकेत या परिस्थिति के यकायक कोई घटना हमारे सामने आ जाती है, जबकि पाठक इसके लिये तैयार नहीं होता, न कोई विशेष कारण ही होता है। उदाहरण स्वरूप लाखी की मां की आकस्मिक मृत्यु, मृगनयनी और मानसिंह का एक दृष्टि में प्रेम, फिर तुरन्त विवाह, आखेट तथा तत्सम्बन्धी हिस्सों में जल्दबाजी से काम लिया गया है। १

---

१ देखिए—श्री हरस्वरूप माथुर :— मृगनयनी समीक्षा, पृष्ठ ७३

ये दोनों समवयस्क हैं—आयु लगभग १५-१६ वर्ष, परन्तु निन्नी
वलिष्ट और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेरी। निन्नी
सौन्दर्य में अनुपम है। राई में गरीबी से जीवन निर्वाह करते हैं।
धीरे-धीरे अटल लाखी की ओर आकृष्ट होता है और यह बाद में
प्रेम के रूप में परिणत हो जाता है। दुर्भाग्य से इनके विवाह में
जाति-पांति का भेद आ जाता है—अटल गूजर और लाखी अहीर
है। सच्चे प्रेमी रूढ़िवादी ब्राह्मण पुजारी बोधन से अनुनय विनय
करते हैं किन्तु वह विवाह कराने को राजी नहीं होता। इसी बीच
में लू लगने से लाखी की माता का देहान्त हो जाता है और बेचारी
लाखी को निन्नी और अटल के साथ रहने पर विवश होना पड़ता
है। समाज इनको तिरस्कृत करता है और जाति बिरादरी वाले चैन
नहीं लेने देते।

मृगनयनी के रूप की चर्चा ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर
तक पहुँचती है। मांडू के शासक गयासुदीन को भी इसका पता
अपने मुँह लगे नौकर ख्वाजा मटरू द्वारा लगता है। वह दोनों नटों
के एक दल को प्रलोभन देकर दोनों कन्यायों को बरवश ले आने की
योजना बनाते हैं। नट आकर राई के समीप अपना पड़ाव डालकर
वस्त्र आभूषण एवं भोजन द्वारा दोनों लड़कियों को फुसलाते हैं, पर
वे स्वाभिमानी, निडर प्रकृति की हैं। नट अपनी सहायता के निमित्त
मांडू से चार सैनिक बुलाते हैं। संयोग से ये चारों रात्रि की चांदनी
में छिपकर उनमें से दो को मार भगाती हैं, शेष भाग जाते हैं। भावी
आक्रमण की आशंका से सम्पूर्ण ग्राम त्रस्त हो जाता है। बचाव
के लिए प्रार्थना का संदेश लेकर उस ग्राम का पुजारी बोधन राजा
मानसिंह के पास जाता है।

अश्वारोहियों की मृत्यु एवं निन्नी को न पाने के कारण क्रुद्ध होकर
गयासुद्दीन ग्वालियर और राई पर आक्रमण की योजना बनाता है।
राजा मानसिंह बोधन पुजारी से मृगनयनी के रूप की चर्चा सुनकर
आखेट के बहाने राई आता है, लक्ष्यवेध में दोनों लड़कियों का

भारी सफलता प्राप्त होती है। निन्नी पर राजा आशक्त होते हैं। उससे विवाह कर ग्वालियर ले आते हैं। अब अटल और लाखी ही बच रहते हैं: ये पुजारी से विवाह के लिये आग्रह करते हैं! वह समाज रूढ़ियों में बँधा हुआ है, वर्णाश्रम धर्म का कट्टर अनुयायी है। अतः स्वयं अटल और लाखी विवाह कर लेते हैं। रूढ़िवादी समाज को ... न कहां? पंचायत इनका बहिष्कार करती है। समाज तथा जाति के अत्याचारों से डर कर अटल मटरू-प्रेरित नटों के साथ मगरोनी चला जाता है। एक नटिनी पिल्ली अपनी भाव भंगिमा और अंग संचालन द्वारा अटल को अपने वश में करने का उद्योग करती है। गयासुद्दीन नरवर पर आक्रमण कर देता है। आश्रय के लिये सब किले में भागते हैं। वह फिर भी अटल और लाखी के पीछे लगे रहते हैं। पोटा और पिल्ली के अतिरिक्त अन्य नट किले में आ जाते हैं। ये दोनों मांडू यह समाचार देने चल देते हैं।

निन्नी ग्वालियर में रानी मृगनयनी के नाम से प्रसिद्ध होती है। राजा मानसिंह के पहिले ही में ८ रानियाँ हैं, किन्तु वह नई रानी को बुद्धि, वीरता, लक्ष्यवेध, और कला-सौन्दर्य में निपुण पाता है। कुशाग्रबुद्धि होने के कारण मृगनयनी शीघ्र ही संगीत में भी निपुण होने लगती है। इस शान्ति जीवन में यकायक एक तूफान आता है जब राजा मानसिंह के पास नरवर पर आक्रमण की सूचना पहुँचती है। मृगनयनी के हृदय में भाई के लिए प्रेम उमड़ता है; लाखी और अटल को राई से लाने के लिये प्रबन्ध किया जाता है, किन्तु वहाँ जाकर विदित होता है कि वे पहले से ही लुप्त हो चुके हैं। मानसिंह नरवर की रक्षा के लिये पहुँचता है। उधर पोटा और पिल्ली लाखी के समाचार पहुँचा कर किले में लौट आते हैं। एक रात रस्सा बांध कर उसके सहारे नट लाखी को लेकर भाग निकलना चाहते हैं कि लाखी कँगूरे से बँधी हुई रस्सी को काट डालती है और पिल्ली को उसकी कुटिलता की सजा मिलती है।

गयासुद्दीन ने आक्रमण किया पर राजा मानसिंह के समय पर आ जाने से किला बच गया। यहाँ लाखी और अटल मिल जाने से राजा को अतीव प्रसन्नता हुई और वे स्नेह और सम्मान के साथ ग्वालियर ले जाये गये। मृगनयनी ने इन दोनों के निवास का समुचित प्रबन्ध कर दिया। अटल और लाखी का शास्त्र सम्मत विवाह करा दिया गया। विवाह के पश्चात् जब सहभोज हो रहा था, बड़ी रानी ने मृगनयनी को विष देने का षड़यन्त्र किया किन्तु परमेश्वर की कृपा से प्राण बच गए। अटल-लाखी को राई की गढ़ी दे दी गई। वे वहां शान्ति से रहने लगे। उधर सिकन्दर लोदी ईर्ष्या मन में लिये बैठा ही हुआ था। उसने दुबारा ग्वालियर पर आक्रमण की योजना बनाई। पहले राई की गढ़ी पर आक्रमण हुआ। एक रात जब गढ़ी पर लाखी रात को फिर रही थी, उसने एक स्थान पर आक्रमणकारी सैनिकों को चढ़ते देखा, थोड़ा-सा युद्ध हुआ, लाखी का स्वर्गवास हो गया। उधर मानसिंह ने किले से निकल कर आक्रमण किया और सिकन्दर को पीछे हटा दिया। उसे यह मालूम करके बड़ा दुःख हुआ कि लाखी और अटल का देहान्त हो गया है।

सिकन्दर ने दुबारा सहायक सेना की मदद से नरवर और ग्वालियर पर आक्रमण किया। इस बार मानसिंह को भी किले से ही लड़ना पड़ा। नरवर का पराभव हुआ; अनेक मूर्तिएँ एवं मंदिर नष्ट कर सिकन्दर दिल्ली लौट गया। ग्वालियर पर वह उस समय आक्रमण न कर सका। वह चाहता था कि नई सेना के द्वारा पुनः हमला किया जाय। इसी की तैयारी में उसकी मृत्यु हो गई।

राजा मानसिंह तोमर ग्वालियर में ललित कलाओं के विकास में संलग्न रहे, सेना का संगठन करते रहे। मृगनयनी के दो पुत्र हुए किन्तु उत्तराधिकार की समस्या बड़ी रानी सुमनमोहनी के पुत्र को देकर हल हो गई। मृगनयनी ने अपना स्वार्थ न देख कर्त्तव्य पथ का अनुसरण किया। वह ललित कलाओं के प्रोत्साहन के अतिरिक्त प्रजा के सुख-समृद्धि का सदैव ध्यान रखती रहीं।

कथानक की विशेषताएं

१—मूल कथानक : ऐतिहासिक सत्यता की रक्षा

'मृगनयनी' का मूल कथानक (राजा मानसिंह तोमर तथा गूजरी रानी मृगनयनी की प्रणय कहानी) ऐतिहासिक आधारों पर खड़ा किया गया है। मानसिंह तोमर १४८६ से १५१६ तक ग्वालियर का अधिपति रहा। इतिहासकारों ने राजा मानसिंह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अंग्रेज इतिहासकारों ने तो मानसिंह के शासन काल को तोमर शासन का स्वर्णयुग कहा है। १५ वीं शताब्दी के अन्त और १६ वीं शताब्दी के प्रारम्भ का प्रारम्भ राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से भारतीय इतिहास में अस्थिरता का युग था; अनेक प्रकार की कठिनाइयां मार्ग में थी; सिकन्दर ने ५ बार ग्वालियर पर आक्रमण किया था पर तमाम संकटों के होते हुये भी राजा मानसिंह ने उसे पीछे हटा दिया था। ऐसा अनुमान है कि गूजरी रानी मृगनयनी तथा राजा मानसिंह का विवाह १४९२ के लगभग हुआ होगा ग्वालियर के किले में गूजरी महल और मान मन्दिर इसके प्रमाण हैं

वर्मा जी ने ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि का चित्रण करते हुये इस उपन्यास में मृगनयनी तथा राजा मानसिंह के चरित्रों को उभारा है प्रारम्भ से अन्त तक इसी प्रायः कथा के चित्रण में संलग्न रहे हैं किंवदन्तियों का भी सहारा लिया गया है, किन्तु उन पर भी पर्याप्त खोजबीन की गई है।

मूल कथानक को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—(१ राई के ग्राम से दरिद्र किसान की सुन्दरी कन्या निन्नी के रूप में मृगनयनी का चित्रण। इस भाग में निन्नी का सरल आडम्बर-विहीन ग्रामीण जीवन, बाण संधान, लक्ष्यवेध की निपुणता, साहस और पराक्रम चित्रित है। यौवन के प्रभात में वनवासिनी शकुन्तला की तरह

यह स्वच्छन्द, सशक्त, निर्भीक वीरवाला है। अरने भैंस, जंगली सुअरों और नाहरों के शिकार में उसे विशेष रुचि है। इस भाग में निन्नी की शिकार प्रियता के साथ नटों के षड़यन्त्र से रक्षा, दो सैनिकों का वध, लक्ष्यवेध परीक्षा तथा उसका मानसिंह के साथ विवाह का विस्तार से वर्णन किया गया है। घटनाएँ प्रायः निन्नी के चरित्र को उभारती हैं। निन्नी और लाखी का जङ्गलों में निर्भय घूमना, खेतों की रक्षा, आखेट, नट शिविरों में आना जाना, गांव-वालों के अत्याचार, जाति-पांति की कठोरता, उसकी फैलती हुई सौन्दर्य कीर्ति कथा में रोचकता, सरसता और कौतूहल बनाए रखती है।

विवाह के पश्चात् उपन्यास का दूसरा भाग प्रारम्भ होता है। कथानक का यह भाग मृगनयनी में अपेक्षा मानसिंह तथा तात्कालिक राजनैतिक पृष्ठ-भूमि से अधिक सम्बन्धित है। इसमें मृगनयनी वह महत्त्व प्राप्त नहीं करती, जो उसे प्रथम भाग में प्राप्त हुआ है। इसमें रानी मृगनयनी का वैवाहिक जीवन, राजमहलों में होने वाले षड़यन्त्र, सुख-विलास, रानियों की पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष, सन्देह, मृगनयनी की कला प्रियता, कर्त्तव्यशीलता, सहृदयता, गौरव और अपूर्व त्याग से सम्बन्धित घटनाओं का चित्रण है। इसमें मानसिंह का चरित्र उभारकर चारों ओर फैला हुआ दीखता है, किन्तु जहां २ मृगनयनी को प्रवेश कराया गया है, वहाँ वहां उपन्यासकार का हृदय उसमें रमा है। कला-साधना और संगीत के अभ्यास के वर्णन अत्यन्त सजीव हैं। मानसिंह-मृगनयनी के रोमांटिक सम्मिलन सफल और आकर्षक है।

मूल कथावस्तु में प्रायः कोई परिवर्तन संभव नहीं होता, क्योंकि मुख्य पात्र-पात्री इतिहास विख्यात स्त्री-पुरुष होते हैं। वर्मा जी ने ऐतिहासिक अनुसंधानों पर मानसिंह और मृगननयनी के कार्य, चरित्र और रुचि का चित्रण किया है। सर्वत्र उन्हें ऐतिहासिक सत्यता, आदर्शों की रक्षा एवं अन्तिम प्रभाव की एकता का ध्यान

रहा है। मानसिंह के आठ रानियों का होना, मृगनयनी का अपने पुत्रों को राज्य का उत्तराधिकारी न बना, बड़ी रानी के पुत्र विक्रमादित्य को उत्तराधिकारी बनाना, राई ग्राम से ग्वालियर के किले तक साँक नदी की नहर बनवाना, नटनी का रस्से के सहारे किले से बाहर होना, लाखी-अटल की गढ़ी खड़हर—ऐतिहासिक घटनाएं हैं, जिनके प्रमाण हैं। लेखक ने स्वयं लिखा है।

"उपन्यास में आये हुये सभी चरित्र-थोड़ों को छोड़कर ऐतिहासिक हैं। विजय जंगम लिङ्गायत था। ग्वालियर के किले के भीतर जैसे तैल मन्दिर बना, उसी प्रकार कर्नाटक से विजय प्रादुर्भूत हुआ विजयजंगम लिङ्गायत मानसिंह तोमर का मित्र था 'मृगनयनी ने अपने विवाह से पूर्व राजा मानसिंह से जो वचन लिए थे, उनमें से एक यह भी कि राजा राई गाँव से ग्वालियर किले तक सांक नदी की नहर ले जायँगे। राजा ने यह नहर बनवाई। उसके चिह्न अब भी वर्तमान हैं।"

गौण एवं प्रासंगिक कथाएं

मूल कथानक वृक्ष के तन के समान है, तो उससे जुड़ी हुई अन्य छोटी छोटी कथाएं टहनियों की तरह हैं। प्रासंगिक कथाओं के द्वारा उपन्यासकार मुख्य चरित्रों पर अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालता है और कथा की रोचकता और उत्सुकता की अभिवृद्धि करता है। कुछ प्रासंगिक कथायें अपने छोटे से आकार में ही पूर्ण होती हैं, और उनका थोड़ा सा हिस्सा मूल कथानक से संयुक्त रहता है।

'मृगनयनी' में निम्नलिखित गौण कथाएं हैं—(१) लाखीराम और अटल की प्रेम कहानी। इसमें रोमांस, सच्चा प्रेम, आत्म-बलिदान और वीरता का मणिकांचन सम्मिश्रण है। (२) गयासुद्दीन और उसके पुत्र नसीर की कामुकता (३) सिकन्दर का आक्रमण

तथा क्रोध (४) गुजरात में महमूद बघर्रा के अगणित विजन और रक्तपात (५) नटों-पोटा पिल्ली की जासूसी और लाखी निन्नी को बन्दी बनाने के सतत प्रयत्न (६) राजसिंह और कला की कहानी ये गौण कथाएँ स्वतन्त्र रूप से भी मनोरंजक हैं। लाखीरानी और अटल की कहानी का विकास नहीं किया गया, अन्यथा लाखीरानी मृगनयनी से कम नहीं है। गयासुद्दीन और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार प्रियता और अय्यासी, मुसलमान शासकों के चरित्र तथा मनोवृत्ति पर प्रकाश डालती हैं। बघर्रा हास्य रस की सृष्टि करता है। पिल्ली पोता आदि नट-समाज मृगनयनी एवं लाखी के चरित्र विकास मे सहायक हैं। राजसिंह और कला बैजू के साथ गुप्तचर के रूप में कार्य करते हैं। सिकन्दर का ग्वालियर आक्रमण एक ऐतिहासिक सत्य है।

वर्माजी ने बड़े कौशल से उपरोक्त प्रासांगिक कथाओं को मूल कथानक से जोड़ दिया है। ये किसी न किसी प्रकार मानसिंह मृगनयनी से संयुक्त की गई हैं ये पृथक न रह कर प्रमुख कहानी में मिले जुले हैं। इनमें नं० १, ५, ६, कथायें चरित्र विकास तथा रोचकता वृद्धि में सहायक हैं, शेष ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि करती हैं

क़थानक जटिल न होकर जल धारा की तरह सरल और सुबोध है। तमाम सूत्र अलग अलग रह कर भी मूल कथानक को समझने में कोई बाधा उपस्थित नहीं करते। पाठक को ऐसे जटिल वातावरण में नहीं डाला जाता कि वह विभिन्न सूत्रों को पृथक् न कर सके ऐतिहासिक वातावरण को भी रोचक बनाकर प्रस्तुत किया गया है

कथानक में वर्णित घटनाएं तेजी से अपने मूल उद्देश्य की ओर चलती हैं। मृगनयनी के चरित्र का प्रत्येक गुण गुलाब की पंखुरी की तरह खुलता जाता है। इनको इस प्रकार सजाया गया है कि कार्य कारण का सम्बन्ध बना रहता है। लेखक के विवेक या बरबश कथा सूत्र को मिला डालने का दोष कहीं नहीं है। स्पष्ट एवं सुबोध रीति से घटनाएँ परस्पर गुम्फित कर दी गई है।

कथानक छोटा सा है, किन्तु लेखक ने अपने पात्रो को भिन्न भिन्न नई परिस्थितियों में डाल डाल कर रोचकता और कौतुहल बनाये रखा है। पोटा और पिल्ली का नृत्य, निन्नी और लाखी का का बढ़ता हुआ प्रलोभन, अन्त में कंगूरे की हँसी करने से पिल्ली की मृत्यु रोचक तो है ही, गौण पात्रों को प्रकाश मे लाती है। स्वयं भी कार्य-कारण से जुड़े हुए हैं। सिकन्दर, गयासुद्दीन, महमूद, बघर मानसिंह के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं।

परिच्छेद ६२ में भूकम्प की घटना को जोड़ दिया गया है। इससे हास्य रस की उत्पत्ति होती है। महमूद बघर्रा को गिरते पड़ते देखकर हम हँसे बिना नहीं रहते। इससे कथानक में रोचकता, भी आ गई है। संक्षेप में सम्पूर्ण कथानक में रोचकता, कार्य-कारण सम्बन्ध और कलापूर्ण सगुम्फन है। नाना घटनाओं के संघर्ष में पाठक का जी ऊबने नहीं पाता।

पात्र एवं चरित्र चित्रण

'मृगनयनी' के अधिकांश पात्र ऐतिहासिक है, जिन्हें लेखक ने इतिहास सिद्ध तर्कों और प्रमाणों पर आधारित किया है। किंवदन्तियों का सहारा भी बहुत कम लिया है। कुछ गौण काल्पनिक पात्रों की सृष्टि मुख्य पात्रों के चरित्र गौरव की प्रतिष्ठा के लिये की गई है। गौण पात्रों के निर्माण में ऐतिहासिक उपन्यासकार यह ध्यान रखता है कि वे मुख्य पात्र पात्रियों से सम्बन्धित होकर ही प्रकट हों, आकाशदीप की तरह न लटकते रहें।

इन सब पात्रों को तीन भागों से विभाजित किया जा सकता है-

(१) उच्च सामन्तीय वर्ग —इसके अन्तर्गत मृगनयनी, राजा मानसिंह, अटल, लाखी, महमूद बघर्रा, नसीरुद्दीन, सिकन्दर, सुमन

मोहिनी सेनानायक एवं सैनिक इत्यादि सम्मिलित हैं। इनका चित्रण मध्यकालीन सामन्तों या तत्सम्बन्धी नायकों जैसा हुआ है।

(२) कला प्रेमी वर्ग:—इसमें वैजूबावरा, कला इत्यादि संगीत प्रेमी, व्यक्ति शामिल हैं। मृगनयनी इस वर्ग में भी आती है। वे बहुत ही कम समय में नृत्य, गान, चित्रकला में पारंगत हो जाती हैं। इसी में तरह तरह के तमाशे, खेल और अनगिनत करतब दिखाने वाले नटनियां भी शामिल हैं।

(३) ग्रामीण जनता:—जो गरीबी, असमर्थता और रूढ़िवा-वादिता में डूबी हुई है। निन्नी और लाखी का प्रारम्भिक जीवन इसी वर्ग में व्यतीत होता है। राई के भोले पर जाति-पांति के कानूनों से बँधे गांव वाले, शास्त्रीय ज्ञान पर घमण्ड करने वाला रूढ़िवादी पुजारी बोधन भी इसी में है।

इन तीनों वर्गों के पृथक् पृथक् गुण हैं। सामन्त लोग विलासप्रिय धार्मिक दृष्टि से कट्टर, सुरा सुन्दरी में मस्त, चापलूस खुशामदियों से घिरे हुये हैं। सुलतान गयासुद्दीन तथा नसीरुद्दीन लोभी, लोलुप अतृप्त कामनाओं से पुंज है। कला प्रेमी वर्ग में वैजूबावरा गले की मधुरता और संगीतशास्त्र के ज्ञान के लिये विख्यात है। ग्रामीण जनता अन्धकार और निर्धन की शिकार है।

मानसिक वृत्तियां तथा चरित्र के उत्थान-पतन की दृष्टि से भी इन पात्रों को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं :—

(१) आदर्शवादी पात्र—इस वर्ग में चरित्रवान् व्यक्ति आते हैं जो शील गुण सम्पन्न हैं तथा अपनी निष्ठा से समाज की रूढ़ियों को तोड़कर सुधार के इच्छुक हैं। मृगनयनी, लाखी, अटल, राजा मानसिंह, बैजू आचार्य इस वर्ग के हैं। अटलसिंह समाज की पुरानी व्यवस्था से सतत युद्ध करता है, जाति बिरादरी वाले उसके पीछे रहते हैं पर वह दृढ़ता से उनका मुकाबिला करता है। लाखी पिल्ली

प्रमुख पात्रों का अध्ययन

१—मृगनयनी:—

उपन्यास का नामकरण निन्नी, जो बाद में महारानी मृगनयनी बनती है, के नाम पर हुआ है, जिसका संकेत है, कि उपन्यासकार की दृष्टि मुख्यरूप से इसी नारी के शारीरिक, मानसिक और नैतिक सौन्दर्य के प्रदर्शन की ओर रही है।

राई ग्राम में हमें उसके दर्शन तब होते हैं, जब वह यौवन में प्रवेश कर रही है। सौन्दर्य उसका सबसे मोहक मादक गुण है। ग्राम के उन्मुक्त वातावरण में पलकर वह स्वस्थ, वलिष्ट और साहसी बन गई है। शारीरिक शक्ति उसमें इतनी है कि मरे हुये सुअर को पीठ पर लाद कर ले आती है। बाण विद्या, लक्ष्यवेध में वह अद्वितीय है। शिकार करते हुये एक ही तीर में वह अरने भैंसे या सुअर को मार गिराती है। एक बार उसने घायल अरने भैंसे के सींग मरोड़ कर उसे पीछे ढकेल दिया। युद्ध विद्या के भी उदाहरण मिलते हैं। वीरता, आत्म-निर्भरता; साहस, स्वावलम्बन जैसे गुण गरीबी का जीवन व्यतीत करते हुये भी उसमें विकसित हो जाते हैं। एक दृश्य देखिये—होली के दिन की थकावट ने अटल को निश्चेष्ट कर दिया था। खेत की रखवाली के लिये जाना था······

'निन्नी ने कहा, "मैं जाती हूं खेत के मचान पर, तुम घर पर सो जाओ।"

"वाह! वाह!! तुम भी तो थक गई होगी?"

"मैं तो नहीं थकी। खेत को रखा लूंगी, चिन्ता मत करो।"

"जंगली भैंसें, साबर, चीतल, सुअर आयेंगे और खेती को मिटा कर जायेंगे। एक झपकी आई और मैदान साफ।"

"और तुम रात भर जागते रहोगे?"

के झरोखे। उनमे से चाँदी की 'कड़ियों वाली लहरों का नाचता हुआ। देखा जाय और फिर मैं गाऊँ—जाग परी मैं पिय के जगाये'—लहरें चाँदी और मोतियों के हार से पहिने हुये इठलाती हुई नाचती रहेंगी, बन्दनवार सदा हरे रहेंगे, पत्तों की झिलमिलियां निरन्तर चांदनी की भीगी हुई चमक और फूलों की महक से लदी रहेंगी—उसने सोचा।

मृगनयनी आदर्श के रूप मे प्रतिष्ठित की गई है। उसमें सौन्दर्य, शिव और सत्य तीनों का संतुलन है, आदर्श और यथार्थ का मधुर समन्वय है। मानसिंह के लिये वह एक प्रेरक शक्ति है। वह उसे कायरता, मोह, विलास और अकर्मण्यता से बचाकर कर्त्तव्य मार्ग की ओर उन्मुख करती है।

राजा मानसिंह तोमरः—

मानसिंह १४८६ से १५१६ तक ग्वालियर का राजा रहा। इसका चित्रण इतिहास ग्रन्थों में उपलब्ध सामग्री के आधार पर हुआ है। वह वीर और योग्य शासक था। अंग्रेज इतिहास लेखकों ने उसके राज्यकाल को तोमर शासन का स्वर्ण युग कहा है। सिकन्दर ने ग्वालियर पर पांच बार आक्रमण किया, पांचों बार उसे मानसिंह के सामने से लौट जाना पड़ा।

यदि मृगनयनी स्त्री पात्रों में सर्व श्रेष्ठ है, तो मानसिंह पुरुष पात्रों में आदर्श है। वह प्रजा वत्सल, उदार, कला-प्रिय, युद्ध कला और सैन्य संचालन में निपुण है। उसमें सर्वतोमुखी प्रतिभा है। ललित कलाओं का प्रेमी है। सगीत, चित्रकला और नृत्य के प्रति उसकी स्वाभाविक रुचि है।

धर्म क्षेत्र में वह उदार और धर्म भीरु है पर रूढ़िवादिता, पुरान पन्थी और धार्मिक कट्टरता से घृणा करता है। धर्म मे भी वह विवेक और तर्क से काम लेता है, जाति-पाँति में उसे विश्वास नहीं। पुजारी

पुरोहितों के पाखण्ड और अन्ध विश्वासों के प्रति उसे कोई श्रद्धा नहीं। धर्म के व्यर्थ के वाद विवाद—शैव और वैष्णवों के वाक् युद्ध में उसे कोई दिलचस्पी नहीं। वह गीता में निर्देशित कर्म मार्ग में विश्वास करता है। एक स्थान पर वह कहता है—"कर्म मुख्य है। जो इससे बचना चाहते हैं, वे दायें, बांयें पगडण्डियां ढूंढते हैं।" ये शब्द उसकी बुद्धि विवेक तर्क और प्रगतिशीलता के परिचायक हैं।

शिल्पकला और भवन-निर्माण कला से उसे दिलचस्पी है। मानमन्दिर, गूजरीमहल, इत्यादि उसकी भवन-निर्माण कला के नमूने हैं।

प्रजा वत्सलता उसका आदर्श है। जनता में घूम घूम कर वह प्रजा के दुःख दर्द को मालूम करता है। एक मजदूर कहता है—"सुना था महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं, आज जाना कि मजदूरों और किसानों के भी हैं।

उनमें वे दुष्प्रवृत्तियां नहीं हैं, जो तत्कालीन सामन्तों में पाई जाती हैं। नौ रानियों का रखना तथा अन्य रानियों की उपेक्षा ही खटकने वाली बात है। संभव है, तत्कालीन बहु विवाह प्रथा का यह दुष्परिणाम हो।

लाखारानी

चरित्र की वीरता, धैर्य, सौन्दर्य और शिकार में वह मृगनयनी से किसी प्रकार कम नहीं है। प्रारम्भिक जीवन में निन्नी और लाखी एक सी ही धीर, साहसी और शक्तिपूर्ण है। आयु लगभग १५-१६ वर्ष परन्तु निन्नी वलिष्ट और पुष्ट काया की, लाखी दुवली और छरेरी। सौन्दर्य में भी दोनों अप्रतिम हैं। निन्नी की आंखें बड़ी बड़ी और होठों पर फड़कन थी। लाखी की भी उतनी बड़ी तो नहीं, परन्तु काफी बड़ी आंखें थी। उनसे हँसी झरती थी।

वह धीरे अटल से प्रेम करती है। उसका प्रेम आदर्श है, जिसमें प्रेमी के लिये आत्मबलिदान करने की भावना है। वह सस्ते रोमांस से प्रभावित नहीं है। वह जीवन के घोर संघर्ष और कठोरता में पलने वाला सच्चा प्रेम है। विवाह के पश्चात् समाज द्वारा बहिष्कृत होकर भी पतिव्रत धर्म को नहीं छोड़ती। पिल्ली के प्रति उसके मन में ईर्ष्या है, क्योंकि वह उसके पति को छीन लेना चाहती है।

उसमें स्वाभिमान और अटूट साहस है। सामाजिक कोप की परवाह नहीं करती। गयास के सैनिकों को मार भगाती है। उसका सर्वोच्च वीर रूप वह है, जब वह दुर्ग की रक्षा में प्राणोत्सर्ग करती है। वह एक सुन्दर, शक्तिशाली, उदार, जाति-पांति के विरुद्ध विद्रोही, स्वाभिमानिनी महिला है। मरते मरते तक वह अपने पति की सुख कामना करते हुए कहती है कि 'अपनी जाति में विवाह कर लेना।' अटल ने जाति-विरादरी की संकीर्णता के कारण उससे विवाह कर जो दुःख सहे, इसका उसे क्षोभ रहा। नारी सुलभ लज्जा वस्त्राभूपणों के प्रति मोह, स्वाभिमान उसमे वर्तमान है।

अटल—

निन्नी का भाई अटल लाखी का प्रेमी है। जाति बिरादरी के प्रतिकूल लाखी से विवाह कर असंख्य कष्ट सहन करता है। वह सच्चा प्रेमी है, वीर है और सब परिस्थितियों में अपनी प्रेमिका के साथ रहता है। राई मे युद्ध करते हुए वीर गति प्राप्त करता है।

शारीरिक शक्ति, वीरता, स्वाभिमान, और साहस उसमें प्रचुरता से हैं। युद्ध काल की वस्तुस्थिति खूब समझता है। वह भाग्यवादी है पर विपम परिस्थितियों से भयभीत नहीं होता। आदर्श प्रेम और वीरत्व उसके चरित्र की दो बड़ी विशेपताएँ है।

गौण चरित्र

बोधनः—

पुरानी रूढ़ियों और अन्धविश्वासों में फंसा हुआ पुजारी है राई ग्राम में उसकी धाक है। उसे रूढ़िवादिता, ब्राह्मणों की अखण्ड सत्ता, राजा परमेश्वर का प्रतिनिधि है—मे विश्वास है। वर्णाश्रम धर्म को वह श्रेष्ठतम समझता है। अटल और लाखी का अन्तर्जातीय विवाह करा कर वह वर्णाश्रम धर्म को लात नहीं मार सकता। ब्राह्मत्व की श्रेष्ठता पर विश्वास करता है। उसमे कुछ दंभ और जातिगत अभिमान की मात्रा है, शास्त्रार्थ के लिए वह एक दम प्रस्तुत हो जाता है। संक्षेप में, वह निर्भीक, स्वधर्म निष्ठित, मृत्यु से निर्भय, रूढ़िवादी पुजारी है, जो पुरातन धर्म का प्रतिनिधित्व करता है।

विजयजंगमः—

स्वयं कर्मठ और कर्म मार्ग मे अटूट विश्वास रखने वाला तर्कवादी उदार आचार्य है। शरीर की कार्य शक्ति पर उसकी आस्था है 'जीवन मे काम करना. श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना. यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।' ये उसके आदर्श वाक्य हैं। वह राजा को भी कर्म की सलाह देता है। उसकी प्रमुखता यह है कि वह वर्ण व्यवस्था की कट्टरता नहीं मानता। जहां बोधन अटल-लाखी का विवाह कराने को तैयार नहीं होता, वह सहर्ष विवाह सम्पन्न कराता है। वह शैव है, जीव हिंसा को पाप समझता है, महान् कलाकार और विद्वान है। बोधन और विजय दो विपरीत गुणों वाले ब्राह्मण हैं। बोधन में जहाँ प्राचीनता है विजय नवीन विचारधारा का प्रतीक है। उसका व्यक्तित्व ऐतिहासिक है और वह लिंगायत सम्प्रदाय की विचार धारा मे आस्था

रखता है। युद्धों और शिकार में साथ रह कर तथा कला की उपासना के द्वारा वह राजा मानसिंह का हृदय जीत लेता है। वीणा-वादन में आचार्य वैजू से उसकी प्रतिद्विन्द्विता चलती रहती है।

वैजू आचार्य :—

अकबर के दरबारी संगीतज्ञ तानसेन का समकालीन, मानसिंह मृगनयनी के प्रधान गायक गले की मधुरता और वीणा पर अंगुलियों की चतुराई के लिये विख्यात, जाति के ब्राह्मण. गायन वादन बढ़ाने में उसको दिन रात की भूख प्यास अवसर-कुअवसर की परवाह नहीं रहती थी। संगीत के क्षेत्र में विख्यात रहे और इनके सहयोग से राजा मानसिंह को संगीत के प्रति रुचि बढ़ी। स्वभाव से विनम्र और सतोपी वृत्ति के हैं। अन्तर्मुखी चित्र वृत्तियों और अपने क्षेत्र में अप्रतिम है। प्रतिभा और मौलिकता का सम्राट है।

गयासुद्दीन :—

महमूद खिलजी के मरने के पश्चात् उनका पुत्र गयासुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। उसके समय में कालपी हाथ से चली गई, परन्तु फिर से अधिकृति करने की तीव्र इच्छा सदैव उसके मन में रही। उसने मेवाड़ के साथ सन्धि कर ली। वह आशा करता था कि किसी दिन राजपूतों की सहायता से गुजरात और दिल्ली का मुकाबला कर लूँगा। उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपट प्रिय था। मदिरा पीने पर वह सहज स्वाभाविक मानव सा हो जाता था। पीता अधिक नहीं था परन्तु पी लेने पर उसकी मानवीयता, उपेक्षण, हास्य प्रियता तथा कामुकता बढ़ जाती थी। हिंदुओं के साथ वह अत्याचार नहीं करता था। कट्टरता का वह मजाक उड़ाया करता था। इसलिए मुल्ला वर्ग उससे रुष्ट था। कामुकता के अंधेपन में वह पुरुष और स्त्री की पहिचान नहीं रखता

था। वह योग्य शासक था. और राजनीति का उसे अच्छा ज्ञान था। जहर देकर उसे मार डाला गया।

नसीरुद्दीन :--

यह पिता की तरह कामी और विलासी पुत्र है। राजनीति, प्रजा के सुख समृद्धि, या देश की उन्नति में उसे दिलचस्पी नहीं है। वह सुरा-सुन्दरियों में रह कर अपनी उद्दाम वासना और काम पिपासा को तृप्त करने को ही सबसे अधिक सुख समझता है। मटरू उसे दिन रात नाच रंग वासना की पूर्ति और अनैतिकता की ओर उन्मुख करता रहता है। कहते हैं मालवा-सुलतान नसीरुद्दीन की १५ हजार बेगमें थीं; राज्य इसने पाया था पिता को विष देकर वासनाओं की तृप्त के लिये। लगभग १०० वर्ष पश्चात् जहांगीर ने इसकी व्यभिचारी गन्दगी, पाशविकता, का हाल सुना था, तो उसे इतना क्रोध आ गया था कि उसने उसकी कब्र तक उखड़वा कर फेंक दी थी। इसका सम्पूर्ण जीवन कामवासना की तृप्ति में गया।

कथोपकथन

मृगनयनी के कथोपकथन उसके पात्रों के चरित्र-चित्रणों में निजी महत्व रखते हैं। वर्मा जी ने कथोपकथनों को लिखने में विशेष ध्यान और मनोवैज्ञानिकता का परिचय दिया है। सहज स्वाभाविकता, रसणीयता और नाटकीयता इनके विशेष गुण हैं। प्रत्येक पात्र की वय, परिस्थिति, स्वभाव, रुचि, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति इन के द्वारा हुई है। कहीं बड़े, कहीं छोटे, कहीं अति संक्षिप्त रख कर वर्मा जी के नाटकीयता (Dramatic Touch) के स्थल उत्पन्न किए हैं। इन वार्तालापों के अध्ययन से हमें पात्रों के शील गुण स्वभाव का परिचय मिल जाता है। पात्रों के मानसिक विकास के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है।

उदाहरण स्वरूप, कुछ स्वाभाविक छोटे कथोपकथन देखिए —

'ब्याज समेत पा लिया', लाखी खिलखिलाती हुई बोली, 'तुम्हारे गोरे गालों पर कैसा बैठा है। अहा हा हा !! डिठौना सा लग गया !!! अब किसी की नजर नहीं लगने पावेगी !!'

'तुम्हारे एक गाल पर लगने से रह गया है, तो, तुमको किसी की दीठ लग जावेगी !'

'हूँ ! तो लगा दो, नहीं तो अपने हाथ से लगाये लेती हूँ।'

'बाहर चलो, कोई न कोई लगा देगा।'

'कोई कैसे लगा देगा ? जो तुमको लगा सकता है वही तो मुझको लगा सकेगा।'

'भावजें हैं बाहर और कुछ बहिनें।'

'तुम्हारी है कोई ननद ?'

'अरी हिष्ट'—लाखी हँस पड़ी।

कथोपकथन में सजीवता है। पात्रों में जीवन छलका पड़ता है। स्त्री सुलभ लज्जा, सौकुमार्य, योवन के प्रभात की उमंगें और ठिठोली स्पष्ट हो जाते हैं। ये कथोपकथन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी गहरे और सच्चे हैं।

कहीं कहीं पात्र एक-दूसरे के चरित्रों का विश्लेषण करते हैं और उनके स्वभाव, गुण शील, प्रकृति के विषय में जानकारी प्राप्त करा देते हैं:—उदाहरण स्वरूप देखिए:—

उपस्थित जनता ने मानसिंह का जयकार किया ''तमाशा देखने वाली स्त्रियों में से एक-दूसरे से कहा: —

'अपना राजा है बहुत अच्छा। बड़ा रसिया है। है न ?'

'रसिया न होता तो उसको हाथी पर कैसे चढ़ा देता। सलहज, है, उसकी। साले को भी हाथी पर चढ़ा दिया ! अच्छा तो रहा !'

'बाई ! रूप-सरूप ने बिठला दिया हाथी पर। क्या सचमुच तुर्कों की सेना को रस्सी और नसैनी पर से नट उतार लाते नगर में ?

'की तो लाखी ने बहादुरी। इतना तो कहना पड़ेगा।'

'इतनी कि राजा घोड़े पर और वह छोकरी हाथी पर ! हाँ रूप की लुनाई है उसमें । तुमने लखा या नहीं, जब हाथी पर चढ़ने को जाने लगी, तब कैसी आंखी उठाई थी राजा पर ?'

'राजा उसको ग्वालियर ले जाकर महलों में डाल लेगा।'

'राजा जो ठहरा, चाहे जो करे, पर है अच्छा । ठीक समय पर पर आगया, नहीं तो नरवर राख हो जाता उसी ने बचाया '

—मृगनयनी पृष्ठ २०१

इस कथोपकथन से पाठकों को मानसिंह की रसिकता, शील, प्रजावत्सलता, वीरता, सलहज का आदर तथा लाखारानी का सौन्दर्य, बहादुरी, आत्म त्याग, साहस इत्यादि प्रकट हो जाता है।

उपन्यास में अनेक स्थानों पर हृदयगत भावनाओं तथा अन्तःकरण में होने वाले मन संघर्ष को मर्मस्पर्शी ढङ्ग से चित्रित किया गया है। इस विधि का प्रयोग कम है, पर पात्रों को सजीव और सचाई दिखाने का यही उपाय है। जब निन्नी राजमहलों में आती है, तो उसके मन में पूर्व स्मृतियाँ आती हैं। वह सोचती है:—
'वह मचान, वह चांदनी रात जिसमें लहलहाते हुए अनाज के खेत जैसे किसी ललक के मारे नाच करना चाहता हो, सांभर चीतल की टोलियां, बगल में रक्खा हुआ धनुष-बाण, लाखी की ठिठोली क्या सब सदा के लिए हाथ से छूटक गए ? क्या मैं जा न सकूँगी ? क्या यहीं बन्द होकर रहना पड़ेगा ? महाराज ने वचन दिया था कि पर्दे मे नहीं रहोगी। वह निभायेंगे, अवश्य निभायेंगे। नहर की खुदाई का आरम्भ उन्होंने कितनी जल्दी कर दिया ! पर बाहर भी निकलूँगी तो सबेरे कहां जाऊँगी ?'

उपर्युक्त मन. संघर्ष से मृगनयनी के आन्तरिक भावों तथा स्थिति का ज्ञान हो जाता है। सर्वत्र वास्तविकता और स्वाभाविकता की रक्षा का प्रयत्न किया गया है, कृत्रिमता नाम-मात्र को भी नहीं है। वर्माजी की शैली में यथार्थवादी चित्रों को खींचने की शक्ति है। कहीं

कहीं कलात्मकता और सरसता का अपूर्व सम्मिश्रण है, जैसे प्रेम सम्बन्धी समस्त वार्त्तालाप बड़े मधुर और हृदय-स्पर्शी बन पड़े हैं। एक प्रसंग देखिये—

'निन्नी उससे लिपट गई। लाखी ने प्रतिरोध नहीं किया। बोली, 'सचमच बतला तेरे और भय्या के बीच में कभी कुछ ऐसी वैसी बातचीत हुई है न ?'

'लाखी ने मुँह छिपाकर कहा, 'ऐसी वैसी क्या बात ?'
'कोई प्यार की बात। जैसी कथा कहानी में सुनते आते हैं।'

'हट !'
'ऐ हैं हैं ! हट बट नहीं, ठीक ठीक बतला।'
'हमारी तुम्हारी जात में ऐसा होता कैसे हो सकता है ?'
'क्यों नहीं हो सकता है ! भय्या कहते थे हो सकता है।'

इस उपन्यास के कथोपकथनों में कथासूत्र को आगे बढ़ाने और चरित्र की विशेषता दिखाने के साथ पूर्व रोचकता, यथार्थता और प्रभावशीलता है। कहीं कहीं भावभङ्गी मुक्त ढङ्ग के भी कथोपकथन हैं।

प्रो० हरस्वरूप माथुर ने इसके विषय में सत्य ही लिखा है, 'इस उपन्यास में समन्वित-पद्धति पर लिखे गए अनेक कथोपकथन हैं। इसमें कला का जैसा संयमित और निखरा रूप देख पड़ता है, वैसा बहुत कम उपन्यासकारों की कृतियों में दृष्टिगत होता है...यह उपन्यासकार की उच्च कोटि की रचना का परिचायक है...न तो कृत्रिमता का बोध होता है, न वार्त्ता के स्वाभाविक प्रवाह में व्याघात पड़ता है।' १

शैली :—

घटनायें :—

उपन्यास घटना प्रधान है। एक के पश्चात् दूसरी, तीसरी, चौथी निरन्तर घटनाएँ हमारे सामने चित्र-पट की तरह आती रहती हैं। प्रारम्भिक आधे भाग में निन्नी तथा लाखी के ग्रामीण संघर्ष के चित्र हैं। इनमें आखेट, होली के खेल और ग्राम्य जीवन की घटनाओं में रोचकता और सजीवता है। अधिकांश घटनाओं में कार्य कारण का सम्बन्ध है। उपन्यासकार ने इतिहास से सम्बन्धित पृष्ठ भूमि ले कर कई घटनाओं को एक साथ उठाया है, पर मूल तथा गौण चरित्रों का इनसे अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है कुछ घटनाओं का समावेश केवल मनोरंजन मात्र के लिये हुआ है, जैसे प्रारम्भिक होली के चित्र, गांव के मन्दिर के दृश्य, आखेट, नट नटनियों के खेल इत्यादि। शैली में सर्वत्र स्पष्टता, बोधगम्यता, रोचकता और पाठक से कहानी में रुचि उत्पन्न करने के गुण हैं।

वर्णन :—

उपन्यास के वर्णनों की अधिकता है। उपन्यासकार ने आखेट, जंगलों, ग्रामीण शील रिवाजों, होली, फसल कटाई, नटों के खेलों, जंगली जानवरों, युद्धों, महलों के लम्बे-लम्बे सजीव चित्र हैं। पात्रों के हाव-भाव चित्रण करने में मनोवैज्ञानिक शैली अपनाई गई है। वर्मा जी ने पात्रों के बाह्य एवं आन्तरिक मनोभावों का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है—जैसे—नट बेड़ियों के एक छोटे से डेरे का वर्णन देखिए :—

"नट बेड़िये दस-पन्द्रह से अधिक न होंगे। पेड़ों की झुरमुट में थूमियों के ऊपर घास और पत्तों से कुछ झोंपड़ियां छा रक्खी थीं।

एक बड़े से झोंपड़े में उनके दो गधे, दो भैंसें और बकरियाँ बँधे हुये थे। कुछ बन्दर खूँटियों से, एक झोंपड़ी के किनारे कमठे, तीरों भरे तरकस और लम्बे छुरे रखे हुये थे। छोटे बच्चे डाल से टंकी हुई डलियों में थे। पांच सात अधेड़ और जवान स्त्रियां खाना पकाने में लगी हुई थीं। केश लम्बे थे। पुरुष फटी मैली धोतियां पहिने हुये थे, स्त्रियां चिथड़ों गुदड़ोंदार पायजामों में। ओढ़नी कोई नहीं ओढ़े थीं। उरोजों पर केवल चोली कसे हुए। कानों में जस्ते की बालियां और नाक में पीतल के बड़े बड़े नथ। गले में कांच के रंग बिरंगे गुरियों की मालाएँ।'

उपरोक्त वर्णन में लेखक की सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है मनुष्य के विभिन्न कार्यों, छोटी बड़ी विशेपताओं, पोशाकों, रहन-सहन के ढङ्गों को गहराई से देखकर सब कुछ कुशलता से चित्रित कर दिया गया है।

पात्रों के रेखा चित्र

पात्रों के रेखाचित्र बड़ी कुशलता से दो दो तीन तीन पंक्तियों में ही खींचे गए हैं। इन रेखा चित्रों की सबसे बड़ी विशेपता उनकी सजीवता है। चित्रांकन में वर्मा जी को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कागज पर उतारे हुये ये चित्र जैसे स्वयं बोल पड़े हैं। उपन्यास में सर्वत्र प्राणों का स्पन्दन और हृदय की धड़कन है। सजीव शैली में लिखे गये कुछ चित्र देखिये—

"दोनों (लाखी और निन्नी) समवयस्क थीं—आयु लगभग १५ १६ वर्प, परन्तु निन्नी बलिष्ट और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेरी।"

"राजा मानसिंह युवावस्था के आगे जा चुका था, बड़ी काली आँखें, भरी भौंहें, सीधी लम्बी नाक, चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा।

ठोढ़ी दृढ़, होंठ सहज मुसकान वाले। सारा शरीर जैसे अनवरत--व्यायाम से तपाया और कसा गया हो। कद लम्बा और छाती चौड़ी, घनी नोकदार मूछें।"

'अटल हट्टा कट्टा युवक था। आँखें भीग चुकी थीं। सिर के बाल लम्बे थे। इसलिये सारी आकृति में सौम्यता आ गई थी। कई साल के कठोर जंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ और लम्बा कर दिया था।'

'सहसूद बघर्रा, साढ़े तीन हाथ से अधिक ऊँचाई का था, परन्तु चौड़ा इतना था कि बौना मालूम होता था ''''आयु लगभग पैंतालीस वर्ष की थी। मूछें इतनी लम्बी कि सिर पर उनकी गाँठ बाँधता था और दाढ़ी नाभि के नीचे तक फटकार मारती थी।'

वर्मा जी की लघुदर्शिनी स्कैच शिल्प प्रतिभा उपरोक्त उदाहरणों में देखी जा सकती है। उनके उपन्यास ऐसे ऐसे अनेक व्यक्तियों से भरे पड़े हैं किन्तु तीन चार रेखाओं से ही वे अपने पात्र की रूपरेखा स्पष्ट कर देते हैं। अपने पात्रों की विशेषताओं या चरित्र-गत दुर्बलताओं का एक हल्का सा संकेत दे देते हैं। जैसे चित्रकार ब्रश के दो तीन झटकों से रेखाचित्र खींच देता है, उसी प्रकार दो तीन रेखाओं से ही वर्मा जी ने अपने स्कैच खींचे हैं। इन चित्रों में आखेट के चित्र बड़े विस्तृत और स्पष्ट बन पड़े हैं। उनमें वर्णित जंगलों को देखकर हम एक प्रकार से बुन्देलखण्ड की जैसे सैर ही कर लेते हैं।

शारीरिक चेष्टाओं की अभिव्यञ्जना

न केवल ऊपरी वर्णन, प्रत्युत पात्रों, जानवरों, या प्रकृति की नाना वस्तुओं की चेष्टाओं के वर्णनों में वर्मा जी को बहुत सफलता प्राप्त हुई है। उनके वर्णन गत्यात्मक (Dynamic) हैं। उनमें गति है, प्राण है। वे चलते फिरते, लड़ते झगड़ते मरते गिरते हैं

क्रियाओं का बाहुल्य है। इन क्रियाओं, चेष्टाओं, अनुभवों के वर्णन में सजीवता और चित्रोपमता (Pictoril effects) हैं। कुछ शारीरिक चेष्टाओं की सजीवता देखिए:—

'अरे रे रे रे !!!' लाखी ने हँसते हुये होठों पर दोनों हाथ रख लिये और आंखें मूंद लीं। उछल-उछल कर अट्टहास करते हुये निन्नी ने उसे कीचड़ से सान दिया।'

'वे दोनों हँस पड़ीं, दोनों के दाँत मोती जैसे, हँसी जैसे शरद्-कालीन नदी की निर्मल धारा। आँखों में अल्लहड़पन; अंगों में थिरकन जैसे किसी राग की सच्ची तान हो। धीमी झूम वाले कदल-पल्लवों पर से मृगनयनी की आंख लाखी के वस्त्रालंकारों पर गई— रेशम के वस्त्र, मोती और सोने के गहने। लाखी खिल रही थी।'

'लाखी के नथने फूल गये। श्वास प्रश्वास के वेगों के बीच में छाती उठने गिरने लगी। गले की नसें उभर आईं। आंखों में आंसू आगये।'

हास्य एवं व्यंग्य का सम्मिश्रण

यों तो 'मृगनयनी' में शृंगार एवं वीर रसों का प्राधान्य है किन्तु यत्र तत्र हास्य एवं व्यंग्य का कलात्मक प्रयोग भी किया गया है। यह हास्य कहीं पात्रों के आकार, रहन सहन का ढंग, आदतें, स्वभाव इत्यादि के वर्णन से उत्पन्न किया है। उपन्यास का प्रारम्भिक अंश जिसमें होली की ठिठोली का वर्णन है, हास्य से परिपूर्ण है। एक दृश्य देखिए:—

'आओ, आओ, इसी की कमी रह गई है, सो पोते देती हूँ।' निन्नी ने कहा—

लाखी सहमी नहीं। निन्नी से जा चिपटी। निन्नी ने लाखी के गोबर वाले हाथ को अपने एक हाथ की मुट्ठी में पकड़ लिया और

दूसरे से गोबर को छीनकर उसके माथे और एक गाल पर मल दिया ।

महमूद बघर्रा का वर्णन हास्य से परिपूर्ण है । उसकी आदतें, स्वभाव, बोलने का ढंग, भोजन करना ऐसी विचित्रताओं से परिपूर्ण है कि पाठक हँसे बिना नहीं रह सकता । उसे आश्चर्य होता है कि क्या ऐसा व्यक्ति का संसार में होना संभव है, जो कलेवा के अलावा दिन भर में गुजराती वजन का एक मन भोजन करता है ।

नसीरुद्दीन का जल विहार परिस्थिति जन्य हास्य का अच्छा उदाहरण है ! सम्पूर्ण दृश्य को इस ढंग से सजाया गया है कि पाठक पढ़ते पढ़ते नसीर की वासना लोलुपता, मूर्खतापूर्ण आदेशों, हरकतों और अविवेक पर हँसे बिना नहीं रह सकता । एक भाग देखिए:—

'संगीत बन्द करके नसीर बोला, 'पानी में कूद पड़ो और आपस में छुआ-छुअब्बल खेलो । मैं भी पानी में उतरूंगा ····

आदेश—वाहिकाओं ने इस फरमान को अविलम्ब जारी किया । जो युवतियां तैरना जानती थीं, वे कपड़ों को उतार संभाल कर पानी में कूद गईं । जो तैरना नहीं जानती थी. वे घाट पर बैठे बैठे, पानी में कलोलें करती हुई तमाशा देखने लगी । नसीरुद्दीन कभी इस समूह कभी उस समूह को बढ़ावा देने लगा ।

कुछ स्त्रियाँ तैरती खेलती झील में थोड़ी दूर निकल गईं । थक गईं, डूबने को हुईं और सहायता के लिये चिल्लाने लगीं । पास के समूह की कुछ उनको बचाने के लिए सरपटीं । थकी हुई स्त्रियां उनसे उलझकर अपने और उनके भी प्राणों को संकट में डालने की परिस्थिति में आगईं ।

नसीरुद्दीन चिल्लाया,—बचाओ ! इनको बचाओ !!

अनेक कण्ठों से ये शब्द निकले ।

नसीर हाथ-पैर नचाने लगा, उछला, कूदा, लेकिन पानी में नहीं उतरा। मटरू ने उससे भी अधिक उछल कूद की परन्तु कुछ नहीं।

कनात के पीछे सुल्तान के बहुत से नौकर खड़े थे। उनमें से कई जो तैराक थे, कनात को चीर कर दौड़ पड़े; पानी में कूदे और डूबतियों को बचाकर किनारे ले आये· · · चाहते थे कि सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ जाय और पुरस्कार प्राप्त करें। सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़ी। उसने उन लोगों को अपने निकट बुलाया—

'तुम्हारा नाम ?'

उन लोगों ने अपने अपने नाम बतलाये।

'तुम कनात के भीतर कैसे घुस आये ?

उन लोगों की घिग्घी बँध गई।

'किसने कहा था ? किस के हुक्म से आये ? बोलो !

· · · · उनमें से एक बोला, 'जहांपनाह ने हुक्म दिया था कि इनको बचाओ।'

'कमबख्तो ! तुमको हुक्म दिया था ?' वह कड़का

नसीर ने आज्ञा दी; 'इनका सिर धड़ से जुदा कर दो जिसकी आंखों ने यह सब देखा; और हाथ भी काट दो।'

ख्वासियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। कनात के बाहर लेजाकर उनको मार दिया गया फटे गले से नसीर बोला; 'ख्वाजा मटरू सब मजा किरकिरा हो गया। कोई और शगल सोचो।'

ख्वाजा मटरू के होश कूँच कर चुके थे।

सरसता

वर्मा जी की शैली की सरसता और माधुर्य प्रेम और संयोग शृंगार के दृश्यों में विशेष रूप से प्रकट हुआ है। इस उपन्यास के प्रेम मय वार्त्तालापों में शृंगार-रस फूट पड़ा है; पढ़कर पाठक को

मन मयूर नृत्य करने लगता है। अटल और लाखी; मानसिंह और निन्नी के प्रेम वर्णन में शृंगार रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। एक सरस स्थल को देखिये.—

'मानसिंह भी बैठ गया। मृगनयनी मुसकराने लगी। मानसिंह की गम्भीरता चली गई। मानसिंह बोला, 'तुम सचमुच बड़ी हो। मुझसे बड़ी और बहुत अच्छी।'

'वाह! वाह !!'

'ठीक कहता हूँ।'

'कैसे ?'

मानसिंह उसके निकट आने को हुआ। तो मृगनयनी और अधिक मुसकराई।

'और निकट आए तो मैं बहुत छोटी रह जाऊँगी।'

....

मानसिंह बोला, 'तुम्हारी प्रत्येक मुसकान, भिन्न भिन्न समय-पर तरह तरह का दिखलाई पड़ने वाला सलोनापन, तुम्हारी छवि का हर एक अंश ऐसा मूर्त कर देना चाहता हूं, इतना साकार कि जीवन के अन्त तक अपने प्रेम का अचल प्रतिबिम्ब बना रह कर दिखलाई पड़ता रहे'—पृष्ठ ३८७।

युद्धों तथा आखेटों के वर्णनों में वीर रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। लाखी और निन्नी का आखेट मन में साहस, धैर्य और वीरता के भाव उत्पन्न करता है। मानसिंह के युद्ध कौशल, अटल का युद्ध तथा मृगनयनी की लड़ने की उद्दाम इच्छा वीर रस का संचार करते है। इन युद्धों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर ऐसा आनन्द आता है मानो पाठक स्वयं युद्ध में भाग ले रहा हो। सिकन्दर और मानसिंह के युद्ध का वर्णन (परिच्छेद ६६) बड़ा विस्तृत और सजीव है। शैली की स्पष्टता, वर्णन की अपूर्व शक्ति, कलात्मक सामर्थ्य और वीर भाव की अभिव्यक्ति बड़ी सफल है। इनके अनेक उदाहरण दिये जा सकते है।

अलंकार—

पात्रों के रूप गुण तथा मनोभावनाओं की प्रभावोत्पादक अभि-व्यक्ति के लिये वर्मा जी ने अनेक अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमाओं का सौन्दर्य देखने योग्य है। इन उपमाओं का प्रयोग इतनी कलात्मकता से किया गया है कि शैली में सरस प्रवाह और सरसता का संचार हो उठा है। अनेक कथोपकथन बड़े चमत्कार पूर्ण हैं। कुछ वाक्य देखिए—

'.....गयासुद्दीन का गला भर आया और आंखें गीली हो गई, ख्वाजा ने समझ लिया कि सुराही की नियामत ने अपनी गोदी में समेट लिया है।'

'इस कम्बख्त बरसात के लिए क्या कहा जाय ? यह लो, और तेजी से बरस पड़ा ! जैसे आसमान में छेद हो गये हों।"

'अपने मन के सलोनेपन के तकाजे से कैसे लड़ा जांय वे गरीब आप समझे ?

'इस कर्त्तव्य की सुधि ने मानसिंह की कला, कल्पना और ओज की ललित मधुरता को धक्का दिया, जैसे किसी ने मान मन्दिर और गूजरी महल के निर्माण को यकायक रोक दिया है, जैसे बैजू बावरे ने किसी मीठी तान को लेते लेते यकायक वीणा को पटक कर फोड़ डाला हो।'

'मानसिंह के नेत्रों से आभा सी बिखर रही थी। वह आभा उन गीली आंखों में समा गई।'

वर्मा जी ने कुछ उपमाएँ बिल्कुल नवीन ढङ्ग की प्रयुक्त की हैं। इनमें हास्य व्यंग्य का पुट है। जैसे बघर्रा से सम्बन्धित उपमाएँ लीजिये—

(१) बघर्रा बोला, जैसे किसी नाले ने प्रवाह के जोर से बाँध को फाड़ डाला हो।'

(२) बबरा बोला जैसे जमीन के नीचे से दरार में होकर भूकम्प बोला हो

(३) एक लम्बी डकार ली, जैसे बरसात में कोई कच्चा मकान गिरा हो।

कुछ उत्प्रेक्षाओं के कलात्मक प्रयोग बड़े मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। इनसे मूल भाव के उद्दीपन में बड़ी सहायता मिलती है। कुछ उदाहरण देखिए—

(१) लाखी ने उठी हुई गदेली को हिलाकर वर्जित किया मानो रक्षा करने वाले नाग ने फन उठाया हो।

(२) खेत से थोड़ी दूर नदी बह रही थी। उसके एक सिरे का पानी बहता हुआ दिखाई दे रहा था। चन्द्रमा की रिपटती हुई चांदनी झिलमिल जान पड़ती थी मानो चाँदी की चादरों के आवरों पर आवरे चिलचिला रहे हों। सम्पूर्ण लहरों का समूह चांदी की बन चादरों को ओढ़ लेने की होड़ सी लगा रहा था।'

अलंकारों के साथ मुहावरों का भी कलात्मक प्रयोग मिलता है, जिससे भाव-प्रकाशन तथा मानव-स्वभाव का प्रचुर ज्ञान हो जाता है। अलंकारो के प्रयोग में जहां मितव्ययता मिलती है, वहां वे भाव तथा परिस्थिति को भी स्पष्ट करने की अपूर्व क्षमता रखते हैं। नवीन उपमाएँ तथा सौन्दर्य विधान के उपयुक्त उत्प्रेक्षा अलंकारों। का बड़ा मर्मस्पर्शी प्रयोग है।

भाषा—

वर्मा जी की 'मृगनयनी' की भाषा सरल, स्पष्ट और सुबोध है। शब्द चयन में उदारता और भावाभिव्यक्ति में सहज स्वाभाविकता है। व्यर्थ की साहित्यिक जटिलता या संस्कृत गर्भित प्रयोगों से इन्हे अरुचि है। स्वाभाविक गति से वे कहानी कहते चलते हैं। फलतः उसमें पर्याप्त प्रवाह और अभिव्यक्ति की सामर्थ्य है।

बुन्देलखण्डी वातावरण की सृष्टि के हेतु कहीं कहीं स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है। "झीम, विसूरते, उवारी, गाह भ्यात, कचुले, हुमुक, हडकम्प, हुलसा, भकुरने, अमल, रार' इत्यादि अनेक चलताऊ और ग्राम्य संसार में प्रयुक्त शब्दों का यत्र तत्र उपयोग हुआ है। इनसे भावाभिव्यक्ति में कोई अड़चन नहीं पड़ी है।

'मृगनयनी' में अनेक मुसलमान पात्र हैं। यथार्थवाद की दृष्टि से ये पात्र उर्दू फारसी मिश्रित चलती हिन्दी बोलते हैं। अपने पात्रों को स्वाभाविक भाषा देकर वर्मा जी ने उन्हें सजीवता प्रदान की है। मुसलमानों की भाषा में प्रचलित उर्दू शब्दों जैसे—बरदाश्त, जलजले, शुमार, ताजी, पावन्द, उम्र, बहिश्त, खिलत, अमल, जशन, अर्ज, खुदावन्द, फितरत, ताईद, रंजिश—का भी प्रयोग किया गया है। साधारण पाठक भी इनका अर्थ समझ लेता है क्योंकि ये तत्सम रूप में ही प्रयुक्त हुये हैं।

साहित्यिक सरस स्थलों में शब्द संग्रह दर्शनीय है। शिक्षित वर्ग की भाषा में संस्कृत शब्दों का वाहुल्य है। स्वाभाविकता की रक्षा के हेतु आपने शब्द-चयन को वदला है। संस्कृत शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है और तत्सम व तद्भव दोनों ही रूपों में हुआ है। ग्रामीणों की भाषा सरल, सीदी और वोधगम्य है। नगर और ग्राम के पात्रों की भाषा में पर्याप्त अन्तर है। भावाभिव्यंजन की शक्ति बढ़ाने के लिए सहयोगी शब्दों का काफी प्रयोग मिलता है। स्पष्टता सरसता और बोधगम्यता आपके विशेष गुण हैं। कहीं कहीं गानों का भी प्रयोग किया गया है, जिससे वातावरण निर्माण में सहायता मिली है।

देश काल वतावरण

इस उपन्यास में मध्यकालीन भारत की संघर्ष मय स्थिति का सजीव चित्र अंकित किया गया है। यों तो कथानक की घटनायें तथा

मूल पात्र ग्वालियर राज्य, नरवर, राई ग्राम इत्यादि से ही सम्बन्धित हैं, तथापि उपन्यासकार ने समग्र भारत की राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति का इतिहास सम्मत यथार्थ रूप में चित्रण किया है। उपन्यास के संसार मे प्रविष्ट होते ही हमें मध्य युग का संघर्षमय सामन्ती वातावरण मिल जाता है, जिसमें मालवा का गयासुद्दीन, उसका पुत्र नसीरुद्दीन, दिल्ली का सिकन्दर लोदी, ग्वालियर का राजा मानसिंह तोमर तथा अन्य छोटे बड़े व्यक्ति राज्य-लिप्सा, या सौन्दर्य वासना लोलुपता के कारण संघर्ष करते हुये मिलते है

ऐतिहासिक स्थिति

उपन्यास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण मे वर्मा जी सतत प्रयत्नशील रहे हैं। यत्र तत्र ऐसे अनेक वर्णन आये है, जिनके द्वारा वे पृष्ठभूमि की कड़ी जोड़ते, राजनैतिक स्थिति का स्मरण कराते दीखते हैं। रोमांटिक दृश्यों के मध्य मे एक एक ऐतिहासिक दृश्य आ जाता है, जिससे पाठक निरन्तर होते हुए युद्धों, सेनाओं, राज्य वृद्धि के लिए परस्पर झगड़ते हुए सामन्तों को न भूल सके।

उपन्यास का प्रारम्भ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से ही होता है। लेखक ने प्रारम्भ ही मे ग्वालियर पर १५ वीं शताब्दी में होने वाले आक्रमणों बहलोल लोदी तथा उसके उत्तराधिकारी सिकन्दर लोदी के विफल प्रयासो एवं मानसिंह तोमर का निर्देश कर दिया है। सिकन्दर लोदी के पश्चात् ग्वालियर की लौटती हुई समृद्धि तथा पश्चिम दक्षिण मे लगभग छ कोस की दूरी पर साँक नदी के किनारे राई नामक ग्राम का भी कुछ संकेत पाठकों को दे दिया गया है। इस राई ग्राम में तथा उसके समीप के जंगलों मे ही आधा उपन्यास चलता रहता है। कहीं यह वर्णन विस्तृत होकर पाठक को उबा न दे, इसलिए अति संक्षेप मे यह स्मरण करा दिया गया है।

स्थानीय इतिहास के अतिरिक्त समग्र भारत की राजनैतिक अवस्था एवं अशान्त वातावरण का भी चित्रण करा दिया गया है।

जिससे पाठक पात्र की परिस्थिति पर एक विहगंम दृष्टि डाल सके।

'मृगनयनी' में लेखक का सन्देश

ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक का क्षेत्र सीमित रहता है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से वह अपना सन्देश किसी पात्र के माध्यम द्वारा अभिव्यक्त कर देता है। वर्मा जी ने जीवन धर्म तथा समाज के विषय में जो सन्देश प्रकट किये हैं, वे इस प्रकार हैं:—

१—कर्म मार्ग का पथ—

हम व्यर्थ के मत मतान्तर, तर्क तथा उलझी समस्याओं से संघर्ष करने के स्थान पर अपना कार्य करते जांय, कर्त्तव्य से विमुख न हों। सिद्धान्तवाद के कट्टर अनुयायी वनना मूर्खता है। कर्मवाद का संदेश राजा मानसिंह और विजयजंगम पण्डित दोनो देते हैं। विजयजंगम के कुछ सिद्धान्त वाक्य देखिये:—

'जीवन में काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना, यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है।'

'जीवन में कायिक काम ही सब कुछ है। एक काम से मन उचटे
तो दूसरा करने लगे —मैं तो अवकाश इसी को कहता हूँ।'
काम ही सब कुछ है। काम करना ही मानव का धर्म है। काम
करते करते ही मनुष्य स्वर्ग लोक की प्राप्ति कर सकता है।'
राजा मानसिंह कहते है, 'ये बैठे ठाले के वाक् युद्ध व्यर्थ हैं। कर्म
मुख्य है। जो इससे बचना चाहते हैं, वे ही दांयें बांयें पगडण्डियां
ढूंढ़ते हैं ···· न मैं शास्त्री हूं न पण्डित। केवल इतना कह सकता
हूं कि लड़िये मती कुछ काम करिये और आगे की तैयारी में
लगिये ··।'

२—प्राचीन कट्टर रूढ़िवादिता एवं जाति-पांत की संकुचितता का विरोध—

ब्राह्मण की कट्टर पंथ रूढ़िवादिता तथा विजय की उदारता दिखा कर वर्मा जी ने रूढ़िवादिता का खंडन किया है। मानसिंह भी जाति बन्धन और रूढ़िवाद का निरन्तर विरोध करता है और लाखी और अटल का विवाह कराता है। मृगनयनी पर्दा प्रथा को तोड़ती है। मानसिंह के ये वचन देखिये:—

'जनक, महावीर, गौतम बुद्ध कौन थे? ...... शास्त्री सोचो, इस प्रकार का कट्टर वर्णाश्रम हिन्दुओं की कितनी रक्षा कर सका है। रक्षा के लिये ढाल और तलवार दोनों अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। जाति-पांति ढाल का काम तो कर सकी है, और कर रही है, परन्तु तलवार का काम न तो ढाल के युग में उसने कर पाया है, और कभी कर पायेगी।'

बेचारी लाखी जाति-पांति की कट्टरता की शिकार अन्त तक बनी रहती है। मरते मरते तक वह हिन्दू धर्म के इस कलंक को नहीं भूल पाती। वह अन्त में अटल से व्यंग्य करते हुए कहती है—

'ब्याह कर लेना अपनी जाति-पांति में ...।' अन्त तक उसे जाति-पांति की कट्टरता का भूत नहीं छोड़ता।

'मृगनयनी' के परिचय में स्वयं वर्मा जी ने इस समस्या की ओर संकेत किया है—

'जात पात ने भारत में रक्षात्मक कार्य भी किया है और अब भी शायद कुछ कर रही है, परन्तु इसका विनाशात्मक काम भी कुछ कम नहीं हुआ ......।' इससे प्रकट होता है कि जाति-पांति की संकुचितता को उन्होंने जानबूझ कर रखा है।

३—संयम और कर्त्तव्य का महत्त्व—

मानव जीवन का सुख नियम संयम पर निर्भर है। संयम से सौंदर्य और स्वास्थ्य निखरता है; शक्ति आती है। प्रेम स्थिर रह

। मनुष्य का प्रेमी-प्रेमिका के प्रति सतत आकर्षण बना रहता है।
ाचीन भारतीय संस्कृति में संयम वाले प्रेम की ही महत्ता को स्वी-
ार किया गया है। इसी का प्रतिपादन वर्मा जी ने 'मृगनयनी' में
किया है। उनकी पात्रियों का प्रेम प्रेमियों को कर्त्तव्य मार्ग पर आगे
ढ़ाता है, नवीन प्रेरणा देता है। वासना के पंक में नहीं फंसता।
ानसिंह मृगनयनी से उसकी प्रेरणा के विषय मे कहता है—

'तुम संयम से प्रेम को अचल बनाती हो और मैं अपने विकार
से उसे चंचल कर देता हूँ। संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी
टिके रहने की क्षमता रखता है।'

....

मृगनयनी कहती है, 'संकल्प और भावना जीवन के तखड़ी के दो
पलड़े हैं। जिसको अधिक भार से लाद दीजिए, वही नीचे चला
जायगा। संकल्प कर्त्तव्य है और भावना कला। दोनों के समान
समन्वय की आवश्यकता है।'

दबे हुए स्वर मे मानसिंह बोला, 'कर्त्तव्य वाले अंग में अब
कौन सी कसर रह गई है, देवि!

मोतियों की माला और सम्पूर्ण चित्र पर दृष्टि घुमाती हुई मृग-
नयनी ने कर्तव्य वाले अंश पर उंगली रख कर कहा, 'प्रजा के सुख
की, देश की स्वाधीनता की।'

मानसिंह ने काँपते हुए होठों से धीमे धीमे शब्द निकले—कला
और कर्त्तव्य का समन्वय इस कसर को किसी दिन अवश्य पूरा
करेगा।'

४-सच्चा और निष्ठावान् प्रेम—

राजा मानसिंह और मृगनयनी; लाखी और अटल का निष्ठावान
प्रेम चित्रित कर वर्मा जी ने नए आदर्श हमारे सामने उपस्थित किए
हैं। लाखी अटल का पवित्र प्रेम व्यवहारिक है। मृगनयनी प्रेम में
राजा को मदहोश न कर प्रेरक शक्ति का कार्य करता है। वह कहती है

'वीणा को बजाते बजाते, काम पड़ने पर यदि तुरन्त तलवार न उठा पाई, कोमल सेज पर सोते सोते संकट आने पर यदि तुरन्त ही उछल कर कमर न कसी, ध्रुवपद को गाते गाते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर यदि तुरन्त गरज कर चिनौती न दे पाई "तो ऐसी वीणा सेज और ध्रुवपद की तानों का काम ही क्या ?'

५—आदर्श शासक—

राजा मानसिंह के रूप में एक वीर साहसी आदर्श प्रेमी और कला साधक का नमूना उपस्थित किया गया है। वह युद्ध कला और सैन्य संचालन के साथ प्रजा वत्सलता के गुण से परिपूर्ण है। वह झोपड़ी में जाकर गरीब मजदूर की सहायता करता है। मजदूर के ये शब्द देखिए—'सुना था कि महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं, आज जाना कि वे मजदूर और किसानों के भी हैं।'

६—कला जीवन के लिए—

वर्मा जी की कला उपयोगिता इस बात में मानते हैं कि वह जीवन को प्रेरित करे, मनुष्य को कुछ नया संदेश देकर आगे बढ़ाए एवं प्रकाश दे। कर्त्तव्य को भुलाकर निरे सौन्दर्य या वासना को उकसाने वाली कला-साधना में उन्हें विश्वास नहीं। कई पात्रों के मुख से लेखक ने कला और कर्त्तव्य का यह समन्वय चित्रित किया है। राजा मानसिंह के ये वचन देखिए.—

'कला का अनुशीलन और कर्त्तव्य का पालन साथ साथ चल सकते हैं। मैं सेना को भी सजाऊँगा और ललित कलाओं की भी उन्नति करूँगा।'

वह कला क्या जो कर्त्तव्य को लंगड़ा कर दे और वह कर्त्तव्य क्या जो कला का अंगभंग हो जाने दे।'

परोक्ष रूप से वर्मा जी ने चित्रित किया है कि कला, सुरुचि एवं कर्त्तव्य पालन में संतुलन होना चाहिए।

७-नारी प्रेरक शक्ति के रूप में—

वर्मा जी के नारी पात्र प्रेमियों को उत्तेजित कर कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ़ करते हैं। उन्होंने स्त्री गौरव, सौन्दर्य पवित्रता और सांस्कृतिक महत्त्व का सुचारु चित्रण किया है। भ्रष्टा पिल्ली स्वयं अपनी आचार हीनता का दण्ड पाती है। लाखी निन्नी इत्यादि सतत संघर्ष शील बनी रहती हैं। भोग विलास से नारी का सौन्दर्य नष्ट होता है, स्वास्थ्य गिर जाता है और वे निकम्मी हो जाती हैं—ये भाव यत्र-तत्र उपन्यास में अभिव्यक्त हुए हैं। लेखक के संदेश से पूर्ण कुछ स्थल देखिए:—

'नियम संयम से रहिए और मुझे भी रहने दीजिए। मैं चाहती हूं कि उन गुणों के साथ मेरी देह में भी वही बल बना रहे, जिसको राई से लेकर आई हूँ।'

'पहले के सातियों ने आग और चिता को जितना प्यार किया, उसके बराबर तीर और तलवार के साथ भी करना चाहिये था।'

"छोड़िये मुझको, "—मृगनयनी ने कहा, "क्षत्रिय के लिये इस समय जो उचित है, उसी को करने में जुटजाइये। रनवास की रक्षा की चिन्ता को दूर कीजिऐ—मैं उसकी रक्षा का प्रबन्ध करूंगी,

८—फैशन का विरोध—

आज के फैशन, मिथ्या प्रदर्शन के वर्मा जी विरूद्ध हैं। वे चाहते हैं कि भारतीय नारी का शील गुण सम्पन्न व्यक्तित्व ही विकसित हो। वे पतली दुबली न बनकर मजबूत शक्तिशाली चरित्रवान बनें। नट जब भड़कीले वस्त्रों का प्रलोभन देते हैं,तो निन्नी का यह उत्तर कितना भव्य है। देखिये—

'तो क्या नटिनी बन जावें ? आँगन में ये जो तितलियाँ उड़ रही हैं। क्या वैसी बनावट बना लें।'

विचार, उद्देश्य एवं कला की दृष्टियों से वर्मा जी की 'मृगनयनी' एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक रूमानी उपन्यास है। इसमें वर्माजी जी की उपन्यास-कला का पूर्ण विकास हुआ है। कथानक की रोचकता, युद्ध एवं आखेटों की सजीवता और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सूक्ष्मता से, मृगनयनी, अतीव सुन्दर रचना है।

तृतीय खण्ड

झाँसी की रानी : कथानक-सौन्दर्य

१—महत्व :

वर्मा जी ने इस वृहत् उपन्यास का कथानक पर्याप्त ऐतिहासिक अनुसन्धान के उपरान्त तैयार किया है। अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के लिए यह पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। संभवतः इसकी ऐतिहासिक कथा भी उनके अन्य सब ऐतिहासिक उपन्यासों की कथाओं से अधिक लोकप्रिय, महत्वपूर्ण और विशिष्ट है। झाँसी को रानी लक्ष्मीबाई पर अनेक नाटक, उपन्यास, कहानियाँ लिखी जा चुकी है, परन्तु वर्मा जी के प्रस्तुत उपन्यास से अधिक प्रमाणिक और रोचक पुस्तक पहले नहीं लिखी गई थी। यह उनके १४ वर्ष की ऐतिहासिक खोज-बीन, अध्ययन, भ्रमण का परिणाम है। अतएव ऐतिहासिक प्रमाणिकता और अनुसन्धान की दृष्टि से इस उपन्यास से दी गई जानकारी का महत्व असंदिग्ध है। इसके अध्ययन से १८५७ के लगभग भारत की राजनैतिक और सामाजिक दशा का अच्छा ज्ञान हो जाता है। इसमें देशव्यापी स्वराज्य-आन्दोलन की योजना एवं ८५७ की भारतीय क्रान्ति का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया गया है। यह वह युग था, जब भारत ने पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ फोड़ कर फेंक देने का एक महान प्रयत्न किया था। महारानी लक्ष्मीबाई स्वराज्य स्थापन के लिए सतत युद्ध करती रही और उसी पर अपना जीवन न्योछावर कर दिया। अपने समग्र जीवन में रानी लक्ष्मीबाई का एक ही उद्देश्य रहा था—स्वराज्य स्थापन। वे अङ्गरेजों को इस देश से निकाल कर भारतीय राज्य स्थापित करने के पक्ष में थीं। उन्होने कई बार देश की

नृशंसतापूर्वक दमन। इन तीनों भागों को विस्तार से देखने पर इनमें विशुद्ध ऐतिहासिक तथ्यों के अतिरिक्त सुसम्बद्धता भी मिलती है।

उदय —

"उदय" भाग में मनु (लक्ष्मीबाई) के जन्म, बाल्यकाल विवाह और विधवा जीवन की एक झाँकी दी गई है। पेशवाई के पश्चात बाजीराव द्वितीय अपने कामदार मोरोपन्त के साथ बिठूर में रहा करते थे। मोरोपन्त के एक कन्या थी, जिसका नाम मनु था—बुद्धि की कुशाग्र तेज और चपल बुद्धि। उसकी माता भागीरथी बाई का देहान्त चार वर्ष की आयु में ही हो गया था। अतएव लालन पालन पिता द्वारा ही हुआ था।

बाजीराव प्यार में उसे "छबीली" कहा करते थे। बाजीराव ने नाना धोंधूपन्त नामक एक बालक को गोद लिया था। मनु इसी के साथ खेलती थी। बचपन में वीर नारियों एवं स्वातन्त्र्य प्रेमी भारतीय वीर पुरुषों के पुरुषार्थ की गाथाएं सुनते सुनते मनु में देश को स्वतन्त्र करने की उद्दाम लालसा उद्दीप्त हो उठी। बड़ी होने पर तात्या दीक्षित की सहायता से मनु का विवाह झांसी के विधुर राजा गंगाधरराव से हो गया और उसका नाम लक्ष्मीबाई रखागया। उसके साथ सुन्दर मुन्दर और काशी भी आई। विवाह होने के पूर्व गंगाधर राव को शासन का अधिकार न था। उन दिनों झाँसी का नवाब पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया जाया करता था। गंगाधर राव ये अधिकार प्राप्त करने के प्रयत्न पहिले से ही कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उनको अधिकार मिल गया। केवल यह शर्त थी कि एक अंग्रेजी फौज रखी जावेगी जिसका व्यय झांसी को देना होगा। गंगाधर राव प्रसन्नता से फूल उठा, दरबार हुआ, खुशियाँ मनाई गई।

रानी लक्ष्मीबाई का विवाहित जीवन साधारणतः सुखी संतुष्ट ही कहा जा सकता है। पर्दे के कारण वे महल से नहीं निकल

जाती थीं। अतः सवारी, व्यायाम, हथियारों को चलाने का अभ्यास इत्यादि अपनी दिलचस्पी के कार्य वे किले वाले महल के इर्द गिर्द आड़ ओट में कर पाती थीं और अपनी सहेलियों तथा किले के भीतर रहने वाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र प्रयोग मल्ल स्तम्भ कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। गीना पड़ती थीं। धीरे २ उनमें गम्भीरता आई और लाजाक्षयता बढ़ती गई। उन्हें इस बात का बड़ा दुःख था कि आगरा के साथ झाँसी का पचगाँवा से अधिक अंग्रेजों के हाथ से चला गया था।

इधर अंग्रेज निरन्तर अपने राज्य का विस्तार करते चले आ रहे थे, हिन्दुस्तान में सर्वत्र फूट फैली थी, गाँव गाँव में उपद्रवी, डाकू बटमार भरे हुए थे। अंग्रेजों के पास सुसंगठित सेनाएँ और अच्छे हथियार थे। इस लिए उनका राज्य धीरे धीरे बढ़ता जा रहा था।

रानी लक्ष्मीबाई ने शासन प्रबन्ध में रुचि ली और यह प्रयत्न किया कि अच्छी व्यवस्था बनी रहे। उन्हें भय था कि सुव्यवस्था बनी रही तो झाँसी राज्य बचा रहेगा अन्यथा अंग्रेज उसे फिर अपनी देख रेख में ले लेंगे।

रानी के एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ, किन्तु दैव दुर्विपाक से तीन मास पश्चात उसकी मृत्यु हो गई। गंगाधर राव दुःखी रहने लगे। लगभग दो वर्ष पश्चात उनकी भी मृत्यु होगई। रानी लक्ष्मी बाई की आयु केवल १८ वर्ष की थी। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर बड़ा आघात हुआ, किन्तु स्वतन्त्र भावना उनको जीवित रखे थी। तात्या टोपे और नाना धाहूपन्त ही उनकी इस राष्ट्रीय भावना से परिचित थे। राज्य का उत्तराधिकारी न होने के कारण रानी ने दामोदरराव को गोद लेने की प्रार्थना की; किन्तु भारतीय स्वतन्त्रता का दमन करने के इच्छुक अंग्रेजों ने उसे अस्वीकार कर दिया। यही नहीं, ७ मार्च १८५४ को झाँसी का राज्य ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। झाँसी के निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना

चाहती थी; परन्तु रानी ने निवारण किया। उन्हें पांच हजार की आजीवन पेंशन दे दी गई।

अंग्रेजों की बुरी नियत से घृणा कर रानी देश व्यापी स्वाधीनता आन्दोलन की योजना निर्माण करने लगीं। कभी कभी तात्या टोपे भी उनसे वार्ता करने आते। नानासाहब, रावसाहब, दिल्ली मेरठ इत्यादि प्रदेशों के बहुत से मुसलमान प्राणों की होड़ लगा कर स्वराज्य आन्दोलन की योजनाएं बनाने में जुट गए। कारतूसों में चर्बी लगाने के कारण कुछ हिन्दुस्तानियों ने प्रतिवाद किया, अंग्रेजों के प्रति घृणा उत्पन्न होती गई। अब अंग्रेज हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगाये हुए परेड में नहीं आने देते थे, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में खिन्नता फैल गई। मऊ, मेरठ बारकपुर इत्यादि छावनियों में साधू और फकीर विविध प्रकार के वेश और रूपक धारण कर सामूहिक क्रान्ति का कार्य करने लगे अंग्रेजों को ऊपर की तह चिकनी और समतल दीख रही थी, नीचे की इस व्याप्त क्रान्ति का ज्ञान न था। इस देश की जनता व्यक्तित्व मग्न और महासंस्कृत मयी है। बहुत दिनों तक कदापि विदेशी शासन सहन नहीं कर सकती। इस लिए गुलामी की अन्तर्व्यथा से पीड़ित जनता की अन्तरात्मा आसानी के साथ तत्कालीन स्वराज्य क्रान्ति के नेताओं की बात सुन रही थी और मन में गाँठों पर गाँठें बांधती चली जाती थी, कि कब अवसर मिले और सिर से बोझ उतार फेंके।

मध्याह्न—

साधु, नर्तकियों, गुप्तचरों द्वारा चुपचाप स्वराज्य आन्दोलन का कार्य चल रहा था। जुही झाँसी की छावनियों तथा छोटी ग्वालियर में प्रचार कार्य कर रही थी। तात्या टोपे अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। नाना साहब संगठन में लगे रहे। एक विश्वस्त व्यक्ति अजीमुल्ला को विलायत भेजा गया, अर्जी के द्वारा अपील की गई,

किन्तु वह स्वीकृत नहीं हुई। उधर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में अंग्रेजों की शक्ति का ह्रास हो रहा था।

सन् १८४८ से ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार भारतवर्ष भर को, [illegible] बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। कैनिंग ने विपत्ति के बादल को देख लिया था, पर ईसाई धर्म के प्रचार के लिए वह भारत आया और धर्म प्रचार के लिए हिन्दुस्तान के खजाने से निकाल कर रख दी।

इधर नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह और उनकी बेगम जीनत महल, अवध की बेगम हजरत महल और रानी लक्ष्मीबाई का स्वराज्य आन्दोलन प्रचार जारी था। स्वाधीनता युद्ध के लिए क्षेत्र तैयार हो रहा था। संयोग से सन १८५७ की जनवरी में एक घटना हो गई। दमदम की छावनी में एक मेहतर सिपाही ने पानी पीने का एक लोटा माँगा। ब्राह्मण सिपाही मेहतर को लोटा कैसे देता। वह मेहतर हो या न हो प्रचारक अवश्य था। उसने ताना दिया। बोला—

"जात पाँत का यह घमण्ड! आ रहे हैं कारतूस जिनको दाँत से खोलना पड़ेगा, जिसमें सूअर और गाय की चर्बी लगी है। देखें तुम्हारी जात इन कारतूसों के प्रयोग के बाद रहती है, या नहीं।"

छावनियों में इस बात से सनसनी फैली, क्षोभ फैलता और बढ़ता गया। दमदम के इन सिपाहियों ने हजारों चिट्ठियां हिन्दुस्तान भर की छावनियों में भिजवाईं। झांसी की छावनी में भी यह चिट्ठी आई। फरवरी में बारकपुर की १९ नम्बर पल्टन को कारतूस प्रयोग करने के लिए दिये गये। उन्होंने प्रयोग करने से इन्कार कर दिया। उस पल्टन के एक सिपाही मंगल पाण्डे को फाँसी दे दी गई।

१० मई को मेरठ में तलवार, बन्दूक चल गई। अंग्रेजों को मार कर सिपाही दूसरे दिन दिल्ली पहुँच गए। वहाँ की फौजें भी उनसे मिल गईं। भारतीय फौज ने दिल्ली के लाल किले पर अधिकार कर लिया। बहादुरशाह को भारत का सम्राट् घोषित किया।

कानपुर में नाना को राज्याधिकार दिये गये। झाँसी में महारानी लक्ष्मीबाई ने कार्य संभाला। झाँसी को निर्बल समझ कर पहले नत्थेखाँ तथा फिर सदाशिवराव नेवालकर ने आक्रमण किए पर शूरवीर रानी ने उन्हें पराजित कर भगा दिया। डाकू सगरसिंह को पकड़ कर रानी ने अपना स्वामिभक्त सेवक बना लिया। इस क्रान्ति की सूचना जब इंगलैंड पहुँची तो जनरल ह्यूरोज का दमन के लिए भारत में भेजा गया।

अस्तः—

जनरलह्यू रोज क्रांति का दमन करता आ रहा था। बम और अग्नि बरसाती हुई रोज की सेना १२ मार्च सन् १८५७ को तालबहेट पहुंची। विप्लवकारी भाग गए और रोज ने तालबहेट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ने चन्देरी को पराजित किया। मऊ के दमन के लिए रोज ने बानपुर विध्वंस के पश्चात एक दस्ता सीधा भेज दिया था। उसने झाँसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास सम्वाद भेजा। रानी युद्ध के लिए तैयार बैठी थी। रोज झाँसी की ओर सावधानी से बढ़ा। रावसाहब और टोपे कालपी में थे। तात्या सेना लेकर झाँसी आ रहा था, किन्तु रोज ने उसे बीच में ही हरा दिया।

राहतगढ़ के भागे हुए लगभग पाँच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुए। रानी ने उन्हें नौकर रख लिया। इनमें एक सरदार गुलमुहम्मद भी था। उन्होंने प्रण किया, "स्वराज्य के लिये रानी के चरणों में सिर दे देंगे।" झाँसी नगर के कोट पर, सब फाटकों पर बड़ी-छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया, बारूद और गोले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे किए गए और निरन्तर युद्ध की सामिग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया। दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर पीरअली सागर खिड़की पर, कुंवर खुदाबख्श सैयद फाटक पर, कुंवर सागरसिंह खन्डेराव फाटक पर, पूरन कोरी उनाव

फाटक पर, नियुक्त किये गये। दीवान जवाहर सिंह के हाथ में सम्पूर्ण नगर और फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम गौसखाँ के संचालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ में और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गई।

घमासान युद्ध हुआ जो बहुत दिनों तक चलता रहा। रानी का जासूस पीरअली रोज से मिल गया और सारे गुप्त भेद शत्रु को बताता रहा, संयोग से दूल्हाजू की मानहानि हो गई। वह नाराज रहा और अवसर पाकर उसने विश्वासघात किया। झाँसी का ओर्छा फाटक खोल दिया। इससे अंग्रेज प्रविष्ट हो गए। भीषण मारकाट हुई। रानी लक्ष्मीबाई देशमुख, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, पठान गुलमुहम्मद, सुन्दर आदि के साथ भाग कर कालपी पहुँचीं। रावसाहब और तात्या वहीं थे। दूसरे दिन रानी की इनसे भेंट हुई। उनका इन्होंने बड़ा आदर सत्कार किया।

वहाँ फिर तैयारी प्रारंभ हुई। कालपी अस्त व्यस्त था। रानी को जल्दी ही इस अस्त व्यस्तता का हाल मालूम हो गया। उन्होंने सेना के अनुशासन, कवायद-परेड और युद्ध सामग्री इत्यादि प्रसंगों पर प्रश्न किए पर असन्तोषजनक उत्तर मिले। ये सब व्यक्तिगत पीने तथा आमोद प्रमोद में मस्त रहते थे। कालपी की सेना को व्यवस्थित करने की योजनाएँ बनाई गई। २४ अप्रेल को रोज ने कालपी पर चढ़ाई कर दी।

पेशवा की हार हुई। रानी की सम्मति से ग्वालियर पर आक्रमण किया गया। उसे जीत कर पेशवाई सेना ने हर्ष और गर्व से नगर में प्रवेश किया। पेशवा बड़े ठाट के साथ माँगलिक वाद्य बजवाता हुआ सिंधिया के राजमहल में पहुँचा और वहीं डेरा डाला। लक्ष्मीबाई ने अपना शिविर नौलखा बाग में रखा। पेशवा के साथी सरदार शहर के भिन्न २ महलों में जा उतरे। तात्या के दस्ते के लिए किले वालों ने फाटक खोल दिये।

उधर रोज को सूचना मिली कि बलवाई ग्वालियर की ओर बढ़ते आ रहे हैं। कालपी की जीत के उपरान्त ग्वालियर पर बढ़ा। पेशवा नाच रंग भंग में मस्त रहा। रोज की सेना में कुशल और अनुभवी सिपाही थे। दो घन्टे की कड़ी लड़ाई के पश्चात पेशवा की मुरार वाली सेना को रोज ने हरा दिया और मुरार को अपने अधिकार में कर लिया। अब तो पेशवा तथा बाँदा नवाब किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये। रानी ने अपनी योजना विस्तार से तात्या को समझाई।

१७ जून को सबेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने युद्ध का बिगुल बजाया घमासान युद्ध हुआ। रानी लक्ष्मीबाई तथा उसकी लालकुर्त्ती के सवारों ने छापा मारा। रानी उस दिन विजयी रहीं। दूसरे दिन अंग्रेज जनरल सावधान हो गए और उधर सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण की योजना बनाई। रानी लक्ष्मीबाई प्रचण्ड वेग से लड़ी किन्तु अन्त में सुन्दर, रघुनाथसिंह, देशमुख और गुल मुहम्मद आदि के संग भाग निकली। अंग्रेज सैनिकों ने पीछा किया। एक स्थान पर एक नाला था। घोड़ा अड़ गया। यहाँ भी थोड़ा सा युद्ध हुआ जिसमें रानी घायल हो गईं और बाबा गंगादास की कुटी के समीप स्वर्गवासी हुईं। अन्त तक स्वराज्य की भावना उनके हृदय में विराजमान रही।

कथानक की विशेषताएँ

वस्तु विकास में पटुता--

इस उपन्यास के कथानक में प्रबन्ध-पटुता उपलब्ध है। वर्मा जी ने समस्त ऐतिहासिक अनुसन्धानों को दृष्टि में रखकर एक कथानक का निर्माण किया है। रानी लक्ष्मीबाई इसका केन्द्र है। उदय भाग में रानी का बाल्यावस्था तथा देश में व्याप्त अज्ञान और परतन्त्रता का अन्धकार वर्णित है। इस अन्धकार में मनु रूपी सूर्य का उदय होता है। जनता में धीरे धीरे अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आती है। मध्यान्ह भाग में यह सूर्य अपनी सम्पूर्ण आभा से चमक कर देशवासियों को स्वराज्य के लिए प्रेरित करता

है। प्रत्येक प्रकार की अन्तर वाह्य प्रतिकूल परिस्थितियों में रानी का चरित्र रूपी स्वर्ण तपता है। अंग्रेजों से प्रतिरोध बढ़ता चलता है। "अस्त", मे युद्ध के पश्चात रानी स्वर्ग सिधार जाती हैं। "नैनं छिन्दन्ति शस्त्रानि नैनं दहति पावक" का पाठ करती हुई वे स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बन जाती है।

सम्पूर्ण कथानक रानी के चरित्र तथा विकास के साथ विकसित होता चलता है। रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र ही इस उपन्यास की मूलभित्ति है। अधिकाँश घटनाएँ उन्हीं से सम्बन्धित हैं। प्रबन्धकार की पटुता घटनाओं की शृङ्खलाओं मे देखी जा सकती है। अप्रासंगिक घटनाओं को थोड़ा थोड़ा स्पर्श करता हुआ लेखक झाँसी की रानी के चरित्र विकास को नहीं भूलता। वह भिन्न-भिन्न कथा सूत्रों को सावधानी से सम्हालता चलता है।

२. असम्बद्ध घटनाएँ तथा उनका मूल कथानक से योग—

वर्मा जी ने मूल कथानक के साथ छोटी छोटी और प्रासंगिक कथाएँ भी ले ली है, जिनसे रोमॉटिक स्पर्श आते है, देश काल की परिस्थिति का निर्णय हो जाता है, और थोड़ी देर के लिए हमारा ध्यान मूल कथानक से कुछ दूर हट जाता है।

इन कथाओं में (१) मोतीबाई, खुदाबख्श, (२) मुन्दर, रघुनाथसिंह, ३) जुही-तात्या टोपे, (४) नारायण शास्त्री-छोटी, (५) पूरन झलकारी मुख्य हैं। ये मूल कथानक के साथ चलते रहते है। कहीं-कहीं उपन्यासकार इनमे से किसी को उभार कर हमारा ध्यान आकृष्ट कर देता है, पर वह अपने मूल कथानक पर ही आ जाता है नारायण शास्त्री और छोटी तक को मूल कथानक मे मिला दिया गया है। राजा गंगाधरराव सजा देते हैं। इससे तत्कालीन कट्टरता स्पष्ट हो जाती है।

पजनेश और नारायण शास्त्री की मित्रता दिखाकर लेखक ने पजनेश को भी सम्बद्ध कर दिया है। शास्त्री और पजनेश दोनों

रसिक हैं। इसलिये कट्टर पन्थियों के प्रतिकूल हैं। उस काल में फैले हुए तरह-तरह के मत मतान्तरों को इस माध्यम से अभिव्यक्त कर दिया गया है। मोती, खुदाबख्श, मुन्दर, रघुनाथ, जुही, तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण हैं, जो इस वीर-रस के उपन्यास को रोमांटिक वातावरण से परिपूर्ण कर देते हैं। पूरन-झलकारी आदर्श दम्पत्ति है। इनसे हर प्रकार के पात्र हमें मिल जाते हैं।

३—रोचकता और कुतूहल

सफल उपन्यास के कथानक के ये दो गुण इस उपन्यास के कथानक में वर्तमान हैं। लेखक कहानी कहने की कला में प्रवीण है। दृश्यों को पुनः पुनः परिवर्तित कर लेखक ने रोचकता का ध्यान रखा है। यदि मध्य में रोमांटिक स्पर्श न होते तो सम्भव था, कथानक में शुष्कता आ जाती किन्तु वर्मा जी ने प्रबन्ध की गठन शीलता के साथ वस्तु-विकास में रोचकता का सम्मिश्रण किया है।

पाठक यह जानने को उत्सुक रहता है कि आगे क्या आने वाला है। घटनास्थल पर क्या होगा ? दुर्भाग्य के बादलों से रानी की कैसे रक्षा होगी ? फिर, जब वह रानी को बचते देखता है, तो हृदय में प्रसन्न होता है। यद्यपि वातावरण सृष्टि के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करना आवश्यक हो गया है, तथापि पात्रों में व्यक्तिगत गुण डाल कर रोचकता उत्पन्न कर दी गई है।

युद्धों के दृश्यों में कौतूहल का निर्वाह बड़ी सफलता के साथ हुआ है। आवेश और उत्तेजना में हम भयंकर युद्ध देखते है, अन्दर ही अन्दर भयभीत होते रहते है। अनेक बार हमारी आशाएँ ठीक निकलती हैं, पर कई बार कुछ नवीन बात हो जाती है। आशा निराशा का यह द्वन्द निरन्तर चलता रहता है। वीर रस का बड़ा सुन्दर निर्वाह हुआ है।

चरित्र चित्रण

लक्ष्मीबाई—चरित्र चित्रण की दृष्टि से उपन्यास की प्रमुख

पात्रों को वर्मा जी ने सर्वाधिक महत्ता, स्थान और ऐतिहासिक प्रमाणिकता प्रदान की है। लक्ष्मीबाई अधिकांश घटनाओं का केन्द्र है। उनकी आन्तरिक एवं बाह्य वृत्तियों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। उन्हें हर प्रकार से आदर्श और भारतीय नारी के रूप में उपस्थित किया गया है।

उनका बाल्यकाल

बचपन से मनु की पुरुषोचित कार्यों की ओर रुचि थी। नाना और राव साहब के साथ रहने के कारण उन्हें युवकों के व्यायाम, कुश्ती, मलखम्ब, अश्वारोहण, शस्त्र संचालन की ओर रुचि हो गई थी। उनका शरीर पुष्ट था। छोटी मोटी चोट की वे परवाह न करती थी। उन्हें देश की स्वाधीनता के प्रति प्रारम्भ से ही दिलचस्पी थी। वीर पुरुष एवं नारियों की वीर गाथाएं सुन सुन कर उनमें साहस, बल, निर्भयता, दृढ़ता और वीरता के सद्गुणों का विकास हो गया था। वे आलस्य से सदा दूर रहती थीं, चंचलता, चपलता, स्फूर्ति और नव उद्योग के लिए हठ उनके प्रधान गुण थे। चंचल होने पर भी विचारशील और गम्भीर थी। बचपन से ही वे देश तथा समाज के गम्भीर प्रश्नों पर विचार किया करती थीं। उनकी बुद्धि उनकी अवस्था से बहुत आगे निकल चुकी थी। मनु इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उन्हें "छबीली" के नाम से पुकारते थे। मनु और नाना के तीन भाई साथ २ खेलते, खाते, और पढ़ते थे। मलखम्ब, कुश्ती, तलवार बन्दूक का चलाना अश्वारोहण, पढ़ना लिखना इत्यादि-सब इन तीनों ने छुटपन से साथ साथ सीखा था। सबसे मनु चपल, हठी और बहुत पैनी बुद्धि की थी। आयु कम होने पर भी वह इन हुनरों में उन बालकों से आगे निकल चुकी थी। स्त्रियों की संगति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज संकोच की दमन और झिझक से दूर हटती गई थी। छत्रपति शिवाजी, प्रताप इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनु क

कल्पना को एक अस्पष्ट और अदन्य गुदगुदी दे रखी थी। वह सुन्दर स्वस्थ, वीर, कुशाग्र कन्या थी।

उनका दाम्पत्य जीवन

विवाह के उपरान्त उनका नाम रानी लक्ष्मीबाई हो गया। वे अब भी स्त्रियों को सवारी, शास्त्र प्रयोग, मलखम्ब, कुश्ती आदि का अभ्यास कराती थीं। बचे हुए समय में धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया करती थीं। भगवद् गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। चपलता के स्थान पर अब गम्भीरता, वाचालता के स्थान पर संयम आ गया। क्रुध हो जाने की वृत्ति भी उत्पन्न हो गई थी। व्यंग करने की इच्छा अवश्य कुछ बढ़ती पर थी, परन्तु वह सहज, सरल भव्य, दिव्य मुसकान सदा साथ रही और चित्त की दृढ़ता भी बढ़ती गई। दया, करुणा, अहिंसा, विनोद आदि सद्भाव उनमें विकास पर थे।

स्वराज्य स्थापना, की ओर उनकी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी। नाच रंग नाटक शाला की ओर कोई खास रुचि नहीं थी। उन्हें शृङ्गार रस की कविताओं से उन्हें घृणा थी। गंगाधर राव की, खुशामद की नीति, शृंगार रस की कविता का प्रोत्साहन देना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। कल्पना के सुनहरे पर थोथे जगत में रहने की अपेक्षा वे ठोस कार्य को पसन्द करती थीं। वह उन कामों में दिलचस्पी रखती थीं, जिनमें सार हो। धीरे-धीरे उन्होंने राज्य का प्रबन्ध और महकमों की सुव्यवस्था करना सीखा और बहुत सा राज्य का कार्य सम्हाल लिया। रानी की विलक्षणता बुद्धि एवं प्रतिभा का आभास पाकर विस्मय हुआ। अल्प आयु में उनका आचार विचार आश्चर्य उत्पन्न करने वाली परिपक्वता का सा प्रतीत होता था। उस युग की कन्यायें जिस आयु में खेलना, खाना, पहिनना, ओढ़ना ही सब कुछ समझती होंगी, उस आयु में लक्ष्मीबाई गम्भीरतर होती चली गईं। छुटपन की मनु, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई। मुन्दर मुन्दर और काशीबाई सदा उनके साथ रहती थीं।

आयु में अधिक शृंगार प्रिय, दुर्बल, विलासी और क्रूर पति पाकर भी वे पतिव्रता रहीं। निरन्तर पति को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करती रहीं। पति के रूप में उनमें रमणी सुलभ कोमलता, भावुकता, भारतीय मर्यादापालन, आदर्श एवं व्यवहार का समन्वय था। अपने पुत्र को वे बहुत प्रेम करती थीं। गोद लिए हुए पुत्र को रण मे भी अपने साथ लिए रहीं। पुरानी जीर्ण-शीर्ण सामाजिक रूढ़ियों, ढोंग, आडम्बर से उन्हें घृणा थी वे नारी जागरण के लिए निरन्तर सचेष्ट रहती थीं।

रानी का धार्मिक जीवन

वे धर्म और आध्यात्म से विशेष रुचि रखती थीं। गीता का स्वाध्याय उनके नित्य कर्म का एक प्रधान अङ्ग था। उनका जीवन गीता मे वर्णित कर्मयोगी का जीवन था। प्रगाढ़ धार्मिकता, उदारता, करुणा, प्रेम, और आत्म भाव उनमें कूट कूटकर भरे हुए थे। वे शिव और कृष्ण की अनन्य उपासिका थी। एक ओर विनोद शीलता, तो दूसरी ओर उनमें गम्भीर दार्शनिकता का पुट था। उनका अन्तर बहुत कोमल और उदार था।

पति का देहान्त हो जाने के उपरान्त उनका जीवन धार्मिकता और पूजा से और भी परिपूर्ण हो गया था। विधवा जीवन में वे नित्य प्रातःकाल ४ बजे स्नान कर ८ बजे तक महादेव का पूजन करती थीं और उसी समय गवैये उन्हें भजन इत्यादि सुनाते थे। ११ बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करती और भूखों को खिला कर तथा कुछ दान धर्म करके तब भोजन करतीं...फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिखकर आटे की गोलियां मछलियों को खिलाती। उस समय वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं...सन्ध्या के उपरान्त ८ बजे तक कथावार्ता, पुराण, भगवद्गीता का १८ वाँ अध्याय और भजन सुनतीं।

कठोर संघर्षों तथा युद्धो से भी भजन पूजन उनका नित्य का

क्रम रहा। झांसी की सब औरतें सदा पूजन के लिए उनके इर्द गिर्द एकत्रित रहती थीं।

घनघोर युद्ध में धर्म इनका धैर्य बन जाता था। युद्ध की रातों में भी वे मन्दिर में जाकर महादेव की प्रार्थना करती थीं। स्वप्न में उन्हें भारत माता का ध्यान रहता था। गृहस्थी में रह कर भी वे वैराग्य भाव रखती थीं। वे अन्ततः सती, साध्वी, पति परायण भारतीय ललना का आदर्श बनी रहीं।

वीर क्षत्राणी और कुशल सेनानी

रानी लक्ष्मीबाई के चरित्र का सबसे उज्जवल पहलू एक राजनैतिक क्रान्तिकारी का है। उनका हृदय देश की गुलामी, जनता की जड़ता, मूर्खता विलासिता और शैथिल्य देख कर अत्यन्त दुखी होता था। वे अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति देख कर उत्तेजित हो उठती थीं। वे राजनीति और राजनीति के समीकरण में विश्वास करती थीं। उनका हृदय देश प्रेम से परिपूर्ण था। वे भारतीय संस्कृति, सभ्यता शास्त्र कलाएं सुरक्षित रखने और उन पर आचरण करने में विश्वास रखती थीं।

देश व्यापी स्वतन्त्रता संग्राम की योजना बनाना साहस और वीरता से उसका नेतृत्व करना अनेक युद्ध एवं प्रतिकूलताएं सहन कर लड़ते २ मर जाना उन्हें स्वराज्य की नींव का एक पत्थर बनाती है। वे राजनीति में कुशल थीं। वे जानती थीं कि अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति से होना चाहिए व्यवहार कुशलता, नीति समानता, आपद्धर्म, उत्कट प्रेम उनके रोम रोम में भरा था

युद्ध में उन्होंने अपना क्षत्राणी और कुशल सेनानी का रूप दिखाया। वे युद्ध विद्या में इतनी निपुण थीं कि स्त्री होते हुए पुरुषों से होड़ लेती थीं। उनके वचन सुनकर, सेना में नव स्फूर्ति, साहस, धैर्य और वीर-भाव का संचार हो उठता था। सगरसिंह जैसे डाक

को पकड़ कर अपने ओज और पराक्रम से प्रभावित कर लेना उनके शौर्य का प्रतीक था।

वे सदैव सतर्क एवं जागरूक रहीं। आराम या विलास से उन्हें अरुचि थी। किले पर जब मौत बरस रही थी, वे धैर्यपूर्वक सन मोर्चों का निरीक्षण कर रहीं थीं। वे ऐसी कुशल सेनानी थीं कि दो वार उन्होंने शत्रु को मार भगाया था। नाना भोपटकर के सम्मुख उन्होंने प्रण किया था—

"मैं लडूँगी। आज सब के सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अंग्रेजों का मुझे अकेले सामना करना पड़े, तो करूँगी।"

रानी आदर की भूखी न थीं, वे निरन्तर ठोस और खरे काम में विश्वास करती थीं। कालपी में आकर उन्होंने वहाँ के सैनिकों को सुव्यवस्थित किया, संगठन मजबूत किया और विलासी, पेशवा में नव-जीवन संचार किया। कौंच के दरबार में राव साहब के ये शब्द रानी के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं—

"आपने झाँसी में अंग्रेजों जैसा करारा मुकाबिला किया, वह अवर्णनीय है। कौंच में हमारी सेना और युद्ध सामिग्री को बचा कर ले आने में आपका बहुत बड़ा हिस्सा है। आप सरीखा निपुण सेनापति शायद ही कोई हो।

रानी बोलीं—"कौंच की लड़ाई में आपका प्रबन्ध बहुत रद्दी था। सेना में कोई व्यवस्था नहीं है। अंग्रेजी सेना अपनी व्यवस्था के कारण ही विजय प्राप्त करती है। हमारे सैनिक शूरवीर और पराक्रम में अंग्रेजों से बढ़े चढ़े हैं, परन्तु व्यवस्था और दूरदर्शी योजना की कमी के कारण उनका शौर्य विफल हो जाता है" जब तक आप अपनी सेना का अच्छा प्रबन्ध नहीं करेंगे और संयम से काम नहीं लेंगे, युद्ध में यश प्राप्त नहीं होगा।" रानी ने ... में बनाई उसी के अनुसार मोर्चे बनाए गए, तोपें रखी गईं ...बातों, नियुक्त और सरदार विभक्त किए गए। इससे उनकी ... । युद्ध सम्बन्धी ज्ञान, लोकप्रियता एवं अनुभव स्पष्ट ... का नित्य का

वे युद्ध विद्या और राजनीति में परॉंगत थीं।

गंगाधर राव—

गंगाधरराव साहित्य और ललित कलाओं के पूरे रसिक थे। गायक, वादक, वीणा और पखावज के उस्ताद और रीतिकाल तथा भक्तिरस की ओट वाले कवि गंगाधर राव की महफिल को आबाद करते थे। उन्होंने दूर दूर से नाना प्रकार के हस्त लिखित ग्रन्थ एकत्रित कराये और विशाल पुस्तक भण्डार से अपने पुस्तकालय को परिपूर्ण कर दिया नाटकों का इन्हें विशेष शौक था, वे संस्कृत नाटकों का हिन्दी और मराठी में अनुवाद कराया करते थे। उनका अभिनय भी कराया करते थे और स्वयं अभिनय भी करते थे। यदि पुरुष के अभिनय से सन्तोष न होता था, तो स्त्री की भूमिका में भी आ जाते थे।

स्वभाव के क्रोधी एवं विलासी थे। अपराधियों को कठोर दण्ड देते थे। गंगाधर राव का क्रोध चढ़ जाने पर उतरना मुश्किल से था। जाति और धर्म के मामले में एक बार झगड़ा होने पर उन्होंने अपराधी के गले में तार का गर्म जनेऊ डालवाने का दण्ड दिया था।

विवाह होने के पश्चात गंगाधर को शासन का अधिकार प्राप्त हो गया। उन्हें यह मानना पड़ा कि झाँसी में एक अंग्रेजी फौज रखी जायगी, व्यय झाँसी राज्य को देना होगा। उन्होंने नकद खर्चा न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिये झांसी के राज्य से २ लाख ६७हजार चार सौ अट्ठावन रुपये वार्षिक आय का एक इलाका उन्हें दे दिया। खुशियाँ मनाई गई, परन्तु अनेक झाँसी वासियों को उनमें खोखलापन ही दिखाई दिया। स्वयं राजा को भी में यथेष्ट मनोरंजन प्राप्त न हो सका।

वे हिन्दुस्तानियों की निर्बलताओं को समझते थे। उन्होंने

एक बार कहा था, "हमारे यहाँ फूट है। गाँव-गाँव में उपद्रवी, डाकू और बदमाश भरे हुये हैं। अङ्गरेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिये उन्होंने राज्य कायम कर लिया है।"

उनका दाम्पत्य जीवन साधारणतः सुखी रहा। लक्ष्मीबाई के सन्तव्यों पर वे ध्यान देते रहे। दोनों १८५० में प्रयाग, काशी, गया इत्यादि की यात्रा के लिये गये थे। पुत्र होने के पश्चात उनके स्वभाव में कुछ मृदुलता आ गई थी। रानी के मत को वे आदर की दृष्टि से देखते थे। साधारणतः उन्हें स्त्रियों की स्वाधीनता सहन न थी।

उनमें आत्म सम्मान और राष्ट्रीयता की भावनाएं भी थीं गार्डन की बातें सुनकर उनका देशाभिमान जाग्रत हो गया था वे अनुशासन पसन्द करते थे। गार्डन और गंगाधर राव का यह कथोपकथन देखिये :—

राजा को एक व्यंग्य सूझा। बोले, "इन कानून जाब्ते के द्वारा आपके इलाकों में जनता को न्याय कितने समय में मिल जाता है?"

गार्डन—"अपराध वाले मामले में दो एक महीने लग जाते हैं और दीवानी मामलों में एकाध साल।"

राजा फिर हंसे, कहा—"हमारे यहाँ तो तुरन्त न्याय होता है। मैं तो दो एक दिन से ज्यादा नहीं लगाता। दीवानी और अपराधी मामलों का कोई भेद नहीं करता। पंचायतों के निर्णय को सर्वमान्य मानता हूँ...गफलत करने वाली पुलिस से चोरी का नुकसान भरवाता हूँ जनता पर मेरी धाक होनी चाहिए, न कि मेरे अफसरों की। वह राज्य भी बहुत समय तक नहीं टिक सकता जो कर्मचारियों और पुलिस की धाक पर आश्रित हो। मैं तो अपने अपराधी कर्मचारियों को लोहे की मछली के कोड़े से पीटता हूँ। अशिष्टता को दण्डित करने में भी मैं नहीं चूकता।

सक्षेप में, गंगाधर राव पहले एक दुर्बल, विलासी, कलाप्रेमी शासक थे, शृङ्गार रस की कविता के प्रेमी थे और कठोरता से शासन करते

थे। इतने पर भी उनमें देशाभिमान था। कट्टर पंथियों में वे प्रायः मजाक उड़ाया करते थे। अन्तर्द्वन्द्व के कारण उनके मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई थी और अपराधियों को दण्ड देने के वे नए नए साधन काम में लाया करते थे। खुदाबख्श के आ जाने पर उन्होंने प्रहरी को कैद में डलवा दिया था। और उसे बिच्छू से कटवाने की सजा दी थी। उन्होंने एक विशेष वर्ग के अपराधियों को बिच्छू से कटवाने का विधान कर रखा था। कट्टे में पैर का डालना भॉजना एक साधारण सी बात थी। गहन अपराधों में हाथ- पाँव कटवा डालने की प्रथा जारी थी।

तात्या टोपे —

बाजीराव ने बाला गुरु के अखाड़े वाले तात्या को झाँसी में मोरोपन्त के लिए निवास स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिए उन लोगों के साथ भेजा। यह तात्या ब्राह्मण था। आगे चल कर यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ। टोपे को बिठूर की अपेक्षा झाँसी अधिक पसन्द आई। उसकी कल्पना गंगाधर राव की नाटक शाला में बार बार उलझ जाती थी। झाँसी का रहन सहन, स्त्री पुरुप और वहाँ की प्राकृतिक वातावरण उसको गङ्गा तट से अधिक मनोहर लगे। तात्या वीर सैनिक था। फौजी पोशाक में सिर पर लोहे की फिराँसिसी टोपी पहिनता था। इस कारण गंगाधर राव ने इसे 'टोपे' के नाम से सम्बोधन करना आरंभ कर दिया था।

तात्या को रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में किए गए स्वाधीनता आन्दोलन से पूर्ण सहानुभूति थी। वह एक सेनापति जैसा कार्य रानी की आधीनता में करता रहा। रानी की आज्ञा पालन करना उसका प्रिय धर्म बन गया। वह राजनीति की चालें खूब समझता था और गुप्त योजनाओ को किसी पर प्रकट नहीं होने देता था। वह विश्वस्त दूत का भी कार्य कर सकता था। उसे रानी के विवेक

एवं तेज में पूरा भरोसा था।

रानी और तात्या के वार्तालाप का एक अंश देखिये, जिसमें तात्या की उत्कट देश भक्ति, रानी में अटल विश्वास, बुद्धि और विवेक प्रकट होते हैं :—

तात्या बोला—"आप बिठूर में छत्रपति और बाजीराव और छत्रसाल, न जाने कितनों का नाम लिया करतीं थीं।"

रानी—ये नाम मैं कैसे भूलूंगी" छत्रसाल का नाम अब भी मन्त्र का सा काम करता है।

तात्या—ये मन्त्र कब काम आवेंगे ?

रानी जरा मुस्कराई। तात्या उनकी मुस्कराहट को पहिचानता था""उसने आशा से कान लगाये।

रानी ने कहा—टोपे अभी समय नहीं आया है "समर्थ रामदास का दिया हुआ स्वराज्य सन्देश, छत्रपति शिवाजी का पाला हुआ वह आदर्श, छत्रसाल का वह अनुशीलन अमर और अक्षय है।

तात्या अधीर होकर बोला—महारानी साहब, ये बातें कान और हृदय को अच्छी मालूम होती हैं, पर हिन्दू और मुसलमान जनता तो अचेत सी जान पड़ती है""।

रानी ने प्रश्न किया—दिल्ली का क्या हाल है ?

तात्या—"बादशाह का ? उन बिचारों को नब्बे हजार रुपया साल पेन्शन मिलती है। कविता करते हैं और कवि सम्मेलनों में उलझे रहते हैं। कम्पनी ने उनको नजर भेंट बन्द कर दी है और उनसे कह रहा है कि अपने को बादशाह कहना छोड़ो—नहीं तो पेंशन बन्द कर देंगे।"

उपरोक्त उदाहरण से तात्या की जागरूकता, राजनीति का ज्ञान, तर्क शक्ति, विवेक और प्रगतिशीलता स्पष्ट हो जाती है। वह विलासिता को घृणा करता है, स्वधर्म एवं कर्त्तव्य पालन को महत्ता

प्रदान करता है। वह सैनिक प्रकृति का व्यक्ति है उनका प्रेम भी राजनीति में पगा हुआ है। नत्त की जुही की ओर वह आकृष्ट हुआ किन्तु अपने को सम्हाले रहा। वह नारी प्रकृति को न समझने की अनभिज्ञता स्वीकार करता है। वह काम से काम रखता है, व्यर्थ के रोमांटिक झंझटों में नहीं फंसता जब फौज के सिपाही बदला निकालने को व्यग्र हो जाते है, तो वह निम्न शब्दों में उनका विवेक जाग्रत करता है:—

तात्य— (मोती बाई से)—"अभी मरने मारने का समय नहीं आया है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक पलटन में से तीन अफसर जो बिल्कुल विश्वासके योग्य हों, चुन लिये जावें"" उनसे कह दिया जावे कि वे ईसाई तो होंगे ही नहीं, पर इस समय अपना सब्र न खो बैठें क्रोध भरे रहें, परन्तु उसको निकलने किसी प्रकार भी न दें, नहीं तो सब किया कराया मिट्टी मे मिल जावेगा। अब की वार आऊंगा, तब जो कुछ करना है, उसको तारीख और समय बतला जाऊंगा।

उसके स्वभाव में कुछ दुर्वलताएं भी थीं जैसे—अनुशासन की अस्त व्यस्तता, रूखापन, शुष्कता, प्रेम में राजनीति का आधिक्य। वह एक धीर सैनिक है, स्वदेश के प्रेम से परिपूर्ण है। रण-पंडित है। एक सिपाही के उच्चतम गुण उसमें विद्यमान हैं। देश की बलिवेदी पर मर मिटने की उसमें साधना है।

गौण पात्र

१—पीर अली:—

कुटिल चरित्र का मुसलमान पात्र है। अली बहादुर का मित्र बना रह कर यह षड्यंत्र में हिस्सा लेता रहा और झाँसी के पतन में एक बड़ा कारण बना। यह उपन्यास में विश्वास घातक खल नायक का पार्ट करता है। इसके चरित्र में अकृतज्ञता, विश्वासघात, "बगल में छुरी मुंह में राम राम" उक्ति को चरितार्थ करने वाला, कुटिल जासूस। ऊपरी मन से अपने आपको महारानी का शुभ चिन्तक

बतलाता रहा खेद है कि राजनैतिक रानी उसको गहराई से परख न सकी। विजय के हर्ष में वे अपने हितचिन्तक पर सन्देह करना ईश्वर के प्रति कृतघ्नता की मात्रा को कम करना समझती रहीं। इसलिए पीरअली शीघ्र विश्वास पात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

जब अंग्रेजों की सेना आई, पीरअली जासूस बन कर अंग्रेजी सेना की गोपनीय बातें मालूम करने गया किन्तु किसे मालूम था कि यह विश्वासघात करने जा रहा है। वहाँ जा कर उसने जनरल रोज को झाँसी की सब गुप्त बातें कह सुनाईं। वापस आकर झूठ मूठ बातें इधर भी कहता रहा। पीरअली ही झाँसी के पतन का कारण बना। यह कपटी, दुष्ट, कुटिल विश्वासघातक, देश-द्रोही और धूर्त था।

२—सागरसिंह डाकू:—

निर्धनों को आर्थिक सहायता प्रदान करने वाला तगड़ा फुर्तीला व्यक्ति, आँखें तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों पर चढ़ी हुई—यह है सागर का चित्र। वह रावली के बरुआसागर से कुछ दूर का रहने वाला था। परिवार प्रतिष्ठित सैनिकों का था। काम न मिलने पर डाकू बन गया था। रानी के सामने सागरसिंह अपने वंश के विषय में कहता है—

"हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रह कर युद्ध किये। जब अंग्रेज आये, तब उनकी आधीनता, जिन ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुए और डाके डालने लगे। मैं अपने लिए तथा अपने साथियों के लिए कह सकता हूँ कि हमने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।"

सागरसिंह झूठ नहीं बोलता, वचन का पक्का रहता है और

स्वामी भक्ति रहता है। वह अपने साथियों समेत झाँसी की सेना में भरती हो जाता है। युद्ध में वह रानी का सहायक रहता है। समय आने पर वह अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करता। उसकी सेवा और रानी के प्रति श्रद्धापूर्ण भक्ति उसे हमारी दृष्टि में बहुत ऊँचा उठा देती है। वह डाकू से जनरल बना और खण्डेराव फाटक की रक्षा में मर कर अनन्त गौरव पा गया। रानी ने कहा था, जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं, वह स्वराज्य से बहुत दिनों वंचित नहीं रह सकता। ये शब्द उसके चरित्र का सही चित्र है।

३—नवाब अली बहादुर—

नवाब अलीबहादुर देश द्रोही, स्वार्थी, लालची, खुशामदी व्यक्ति है। यह अंग्रेजों से मिला हुआ है और अपना उल्लू सीधा कर रहा है वह रत्ती रत्ती भर बातें गुप्त रूप से गवर्नर जनरल साहब को पहुँचाता है। वह रानी के खिलाफ होने वाले व्यक्तियों को भड़काता है और चुपचाप उन्हें अंग्रेजों के साथ मिलाना चाहता है। उसी की प्रेरणा से दीवान नत्थे खाँ झाँसी पर आक्रमण करता है। पीरअली उसके षडयन्त्र में शामिल है। अलीबहादुर की झाँसी से पुरानी शत्रुता चली आती थी। उसे अपना स्थान छोड़ना पड़ा था। इसलिए उसके मन में झाँसी के राजा के प्रति क्षोभ और भी सघन हो गया।

अलीबहादुर की चिट्ठी जबलपुर भेज दी गई, नत्थे खाँ ने तैयारी शुरू करदी। अलीबहादुर को बड़ी खुशी हुई। युद्ध में नत्थे खां की पराजय हुई। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया जिसमें पीरअली की सहायता से वह सफल हुआ। अलीबहादुर एक ऐसा दुश्चरित्र व्यक्ति है, जिससे कोई भी देश या जाति कलंकित होती है। ऐसे व्यक्तियों को निन्दा घृणा और तिरस्कार के अतिरिक्त समाज क्या दे सकता है।

४ कप्तान गार्डन—

झाँसी स्थित अंग्रेजी सेना का अफसर था। साहित्यिक, व्यापार कुशल, स्वदेश प्रेमी और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की दृष्टि से देखने वाला! परन्तु भारत के राजाओं के सहलाने फुसलाने की क्रिया का अभ्यासी, अपने कर्तव्य पालन में दृढ़। हिन्दी उसने सीख ली थी। वह राजा गंगाधर राव के पास भी कभी-कभी आया करता था।

५—खुदाबख्श:—

ईमानदार एवं धर्म भीरु मुसलमान राजा गङ्गाधरराव के दरबार में रहते हैं। एक दिन मोतीबाई को रंगमंच पर देखकर उसके मुँह से यकायक "वाह!" निकल पड़ा। मोतीबाई ने खुदाबख्श की ओर आँखें गढ़ाईं। जब जब मोतीबाई रंगमंच पर जिस जिस दृश्य में आई, उसने दर्शकों पर से दृष्टि को समेट कर खुदाबख्श पर केन्द्रित किया। राजा को यह बात बुरी लगी। दूसरे दिन खुदाबख्श को राज दरबार से अलग कर दिया गया और घोषणा करवाई कि यदि वे फिर झाँसी में दिखाई पड़े तो उसके नंगे शरीर पर कोड़े लगाये जायँगे। मोतीबाई की प्रेरणा से वह जीवन भर देश की सेवा करता रहा मानवता और देश प्रेम से उसका चरित्र परिपूर्ण है।

६—गुल मुहम्मद:—

देश भक्ति एवं राज भक्ति में गुल मुहम्मद एक आदर्श मुसलमान पठान है। वह बाहर से आये हुये पठानों का सरदार है। उसका आदर्श निम्न शब्दों से प्रकट होता है:—

"हजूर अमन बहुत समझता है और न बहुत सुनता है। सिर्फ इतना अरज है कि अम लोग झाँसी की मिट्टी में मिलेगा और बहिश्त लेगा। सोराज की आप जानो।" पृष्ठ २६६

वह वीर, साहसी, युद्ध विद्या में निपुण लाल कुर्ती दल का

देता है। लड़ने से कभी भयभीत नहीं होता। रानी लक्ष्मीबाई की रक्षा के निमित्त अन्तिम दम तक उनके साथ रहता है और सदा सर्वदा उनका आज्ञा पालन करता है। अन्तिम समय में जब रानी अकेली रह गई थीं, उसने तीन व्यक्तियों को अकेले मार डाला था, अन्य मैदान छोड़ कर भाग गये थे। जब रानी घायल होकर गिरी तो दिन भर के थके माँदें, भूखे प्यासे, धूल और खून में सने हुए गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुँह फेर कर कहा—"खुदा, पाक परवर दिगार, रहम रहम !" उस कट्टर पठान की आँखें आँसुओं को मानो बरसने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक हिलक कर रोने लगा। दाह संस्कार करने के पश्चात गुलमुहम्मद ने रघुनाथ सिंह से कहा,

"दीवान साहब ! अम कहाँ जायगा ? अम राहतगढ़ से जब चला तब पाँच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहाँ जायगा। अम भी मारेगा और मरेगा। बाई अम को मत हटाओ।"

फिर रानी की पवित्र हड्डियों की रक्षा के लिए उसे रोक लिया गया। वह फकीर हो गया। जब चिता के स्थान पर कुछ हड्डियाँ शेष रह गईं तो उसका हृदय द्रवित हो गया। वह बोला, 'ओ; कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कबी नईं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शता रहेगा।" जब उससे रानी की समाधि के बारे में पूछा गया, कि यह किसका मजार है, तो उसने उत्तर दिया "अमारे पीर का, वो बौत बड़ा वली था।"

गुलमुहम्मद देश प्रेमी, राजभक्त रानी का अनुशासन मानने वाला, दृढ़ चरित्र, सच्चा सैनिक था। उसने रानी के अन्तिम क्षण तक उनका साथ दिया। वह उपन्यास का एक आदर्श चरित्र है। शुष्क पठान होते हुए भी उसके हृदय में करुणा, प्रेम और सहानुभूति विद्यमान है।

७—बरहानुद्दीन—

गुलमुहम्मद की तरह, बरहानुद्दीन भी आदर्श स्वामी भक्त वीर, स्वामी बुन्देलखण्डी पठान है। वह अपने कर्त्तव्य में दृढ़ विश्वासी और प्रण को पूरा करने वाला। उसे जो हुक्म दिया जाता है, पूर्णरूप से पालन करता है। पीर अली को जल्दी ही मालूम हो जाता है कि बरहानुद्दीन चतुर है। वह कभी न कभी उसे पकड़ लेगा। अन्त में बरहानुद्दीन को शक हो ही जाता है। एक दिन वह चुप चाप पीर अली के पीछे चल देता है और उसे गुप्त षड्यंत्र का ज्ञान हो जाता है। वह बताता है तो उस पर अविश्वास किया जाता है और उसे स्तीफा देना पड़ता है। जाते-जाते वह पीर अली और दूल्हाजू से सतर्क कर जाता है। जब देश द्रोही दूल्हाजू फाटक खोल देता है, तो बरहानुद्दीन की सचाई खुलती है।

अपनी मृत्यु से पूर्व वह अपनी देश-भक्ति का सच्चा परिचय देता है। अकेले कई गोरों को तलवार के घाट उतारता है किन्तु यकायक उस पर कई वार हो जाते हैं और वह गिर पड़ता है। रानी ने पास जाकर देखा, वह सिपाही बरहानुद्दीन था। बरहाय ने पहिचान लिया। उसने आँखें फाड़ीं पूरा बल लगाया, लेकिन कठिनाई से बोल पाया, "हजूर माफी" मुश्किल से रानी के मुँह से निकलता है "तुम सच्चे सिपाही हो।"

वास्तव में वह सच्चा, स्वामी भक्त स्वदेश प्रेमी है। उसमें वचन की सत्यता - वीरता, और सच्ची बात कटु ही क्यों न हो, कह देने की ताकत है। रानी उसकी वीरता और स्वदेश भक्ति से बहुत प्रभावित हुई और उसी स्थान पर कब्र बनाने का हुक्म दिया। बरहानुद्दीन सच्चा सिपाही, आदर्श सैनिक, देशभक्त मुसलमान था।

८—दीवान दूल्हाजू:—

प्रारम्भ में दीवान दूल्हाजू रानी का विश्वास पात्र था, किन्तु सुन्दर से प्रेम-भिक्षा में निराश होकर वह नाराज होगया और गद्दारी

पर उतर आया। पीरअली के साथ मिलकर वह जनरल रोज के पास पहुंचा और गंगाजी की सौगन्ध खाकर अंग्रेजों का साथी और रानी का शत्रु बन गया। उसने फाटक खोल दिये और शत्रु को अन्दर घुसा लिया। वह एक दुर्बल चरित्र का व्यक्ति है।

९---रघुनाथसिंह----

धीर, वीर, रघुनाथसिंह रानी का विश्वास पात्र सैनिक है। अन्त तक वीरता पूर्वक सेना का संचालन करता और रानी की सहायता में तत्पर रहता है। वह मुन्दर के प्रति आकृष्ट होता है। उसका प्रेम पवित्र उज्ज्वल और आदर्श प्रेम है। वह अपने प्रेमिका मुन्दर के लिये मर मिटने को तैयार है। एक दृश्य देखिये दोनों प्रेमियों का प्रेम कितना मर्मस्पर्शी बन पड़ा है—

"बुर्ज की मुड़ेर पर एक गोला आकर टकराया।

मुन्दर ने कहा—"यदि यह गोला मुझे लग जाता, तो मैं न बचती। आप मेरे शव को जला देते न ?"

रघुनाथसिंह जरा तीव्र स्वर में बोला, "और मुझको लग जाता तो आप मुझको दो लकड़ी दे देतीं या नहीं ?"

मुन्दर की आँखों में आँसू आ गए।

काँपते हुए गले से वह बोली, "मैं पहले मरूंगी। आप आज गाँठ बाँध लीजिये यदि फिर वह बात कही तो लड्डू पड्डू कुछ नहीं खिलाऊंगी।"

उन आँसुओं के दर्पण में रघुनाथसिंह ने अपने प्राणों की झाँकी देखी। मुन्दर आँसू पोंछ कर चली गई। रघुनाथसिंह को सारा वातावरण नवप्रस्फुटित कलियों से भरा दिखलाई पड़ा। तोप एक खिलवाड़, बारूद और गोले प्यार के खिलौने जान पड़े।"

रघुनाथसिंह अन्त तक रानी के साथ रहे। जब रानी मर गई तब भी वे वहां से पीठ दिखाकर नहीं भागे। उन्होंने अपनी बन्दूकें भरीं, गोले बारूद के झोले लटकाये और आड़ लेकर एक

स्थान पर छुप गये। 'धाँय-धाँय' बन्दूकें चलाईं। फिर एक गोली से मारे गए।

उनके चरित्र में वीरता, साहस, देश भक्ति और बलिदान के सब गुण प्रचुरता से वर्तमान हैं। वे उपन्यास के एक आदर्श पात्र के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं।

९—दीवान जवाहरसिंह—

रघुनाथसिंह की ही कोटि के सच्चे, वीर स्वामीभक्त, देश-भक्त और आज्ञापालक सेवक हैं। रानी को उन पर अखण्ड विश्वास है। रानी की आज्ञा से अन्त में उन्होंने रानी के पाँव छूकर कटीली की ओर प्रस्थान किया।

१०—गौस खाँ—

देशभक्त, वीर तोपची अपनी कला में बेमिसाल, वीर। यह अन्त तक रानी की ओर से लड़ते रहे। रानी के तोपखाने की शक्ति इन्हीं के हाथ में थी।

नारी पात्र—सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई

सुन्दर—

सुन्दर रानी लक्ष्मीबाई की एक दासी है। जब यह आई थीं तो अवस्था १२ वर्ष के ऊपर, शरीर छरेरा, रंग साँवला, चेहरा लम्बा आँखें बड़ी, नाक सीधी, ललाट प्रशस्त और उजला। बड़ी होकर यह रानी की भक्त, सेविका, युद्ध विद्या में निपुण, बन्दूक तोप इत्यादि के दागने में चतुर रही।

मुन्दर—

रानी की एक धीर वीर साहसी दासी। युद्ध विद्या में निपुण सब से निपुण घुड़ सवार। दीवान रघुनाथसिंह की प्रेमिका थीं। इनका प्रेम विशुद्ध और सच्चा था। देश प्रेम की बलिवेदी पर बलि-दान हो गईं।

काशीबाई—

युद्ध में निपुण साहसी दासी। रानी की सदा वफादार रहीं। रानी ने इन तीनों को घुड़सवारी, व्यायाम, युद्ध विद्या में पारंगत कर दिया था। स्वातन्त्र्य युद्ध में इन तीनों ने बड़ा कार्य किया था।

मोतीबाई और जुही—

राजा गंगाधर राव की नाट्यशाला में मोतीबाई और जुही दो नृर्त्तकिएँ थीं। मोतीबाई गायन वादन में बड़ी कुशल थी। उसका अभिनय उच्च कोटि का होता था, स्वास्थ्य और यौवन से परिपूर्ण थी। वह खुदाबख्श की ओर आकृष्ट हो गई। राजा को बुरा लगा। मोतीबाई निकाल दी गई।

जुही अल्प-वयस्का नर्तकी थी। वह उनाव दरवाजे के भीतर मेवातीपुरा के सिरे पर रहती थी। रंगमंच पर इसका नृत्य और गायन अधिक होता था, अभिनय कम। आगे चलकर यह जासूस विभाग में मोतीबाई की नायब बनी। तात्या टोपे से इसका प्रेम हो गया था। फौजों में जाकर इसने बड़ी सफलता से जासूसी का कार्य किया था। स्वातन्त्र्य युद्ध में दोनों ने अच्छा कार्य किया। वह सुन्दर, राष्ट्रभक्त, सैनिक, कुटिल राजनीतिज्ञ और कुशल अश्वारोही थी।

झलकारी—

उपन्यास की एक आदर्श चरित्र पात्री है। वह निर्भीक, वीर, और पराक्रमी है। रानी से उसे प्रगाढ़ स्नेह है। पूरन उसका पति है। प्राचीन संस्कारों में पत्नी होने के कारण वह उसका नाम नहीं ले पाती। आखेट का उसे शौक है। एक दिन वह गोली चला रही थी कि एक बछिया के गोली लग जाती है। बड़ी कठिनता से कोरियों ने इसका प्रायश्चित कम किया। अन्त में रानी की कृपा से पश्चाताप हुआ। जब रानी झाँसी से भाग निकली तो झलकारी ने बड़े साहस का कार्य किया था। ४ अप्रैल १८५८ की रात को

निकल जाने पर बड़े सवेरे झलकारी घोड़े पर बैठकर जनरल रोज के समक्ष पहुँची और उससे कहा, "रानी को कहाँ ढूँढ़ते फिरते हो ? मैं हूँ रानी, पकड़ लो मुझको ।" कुछ काल के लिये अंगरेज धोखे में आ भी गये, पर बाद में बात खुली, तो उसे छोड़ दिया गया । इससे उसका अपूर्व साहस, बलिदान, रानी के प्रति प्रेम, श्रद्धा, विदेशियों से टक्कर लेने में निर्भयता और शक्ति प्रकट होती है । रानी इन्हें इतना प्रेम करती थीं कि कोरिन होते हुए भी हल्दी कूँकूँ के अवसर पर इन्हें अपने अङ्क में भर लिया था ।

चरित्र चित्रण की विशेषताएँ

१—आदर्श चरित्रों की सृष्टि:—

इस उपन्यास के पात्रों को देख कर जो पहली बात हमारा ध्यान आकृष्ट करती है, वह इसमें मिलने वाले आदर्श चरित्र हैं । हर प्रकार का आदर्श हमें इन में मिल जाता है । मूल चरित्र रानी लक्ष्मीबाई का है जो एक आदर्श पत्नी, माता, राज माता, योद्धा और राजनैतिज्ञ हैं । उनमें एक ओर शरीर की शक्ति दृढ़ता, सौन्दर्य है, तो दूसरी ओर पतिव्रता धर्म के प्रति अनुराग, बच्चे के प्रति वात्सल्य और अपने देश धर्म और स्वतन्त्रता के प्रति श्रद्धा । "वे आदर्श की प्रतिमा हैं, उनमें दुर्बलता कहीं दिखाई ही नहीं पड़ती । उनके सम्पर्क में आने वाले स्त्री पुरुष अधिकतर आदर्श ही हैं ।"

उदाहरण के तौर पर बख्शी—बख्शानजू, पूरन—झलकारी, मुन्दर—रघुनाथसिंह, जुही तात्या आदर्श प्रेम के उदाहरण हैं । इनमें से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में स्वदेशानुराग, देश पर बलिदान होने की भावना, त्याग, वीरता और आज्ञापालन के गुण भी भर दिये गये हैं ।

नारायण शास्त्री और छोटी मेहतरानी का सम्बन्ध अनुचित है, किन्तु हम जब शास्त्री जी का बलिदान एवं छोटी की निष्ठा

त्याग, अद्भुत बलिदान की क्षमता देखते हैं, तो हमें श्रद्धा से नत-मस्तक हो जाना पड़ता है।

सेवक और सिपाही के अनेक आदर्श हमें आसानी से उपन्यास में उपलब्ध हो जाते हैं। गुलमुहम्मद जैसा वीर आज्ञापालक पठान, गौसखाँ जैसा सच्चा तोपची, रघुनाथसिंह और जवाहरसिंह जैसे सिपाही, और तात्या टोपे, नाना जैसे स्वामीभक्त देशप्रेमी इस उपन्यास में मिलते हैं। लेखक आदर्श के प्रति सतत प्रयत्नशील है। वह कहता है—

"अपने आदर्श को कभी न भूलना—प्रयत्न ही पहली और पक्की सीढ़ी है।'

आदर्श चरित्रों की महत्ता प्रकट करने और उनके चरित्रों के सब पहलू चमकाने के लिये वर्मा जी ने कुछ दुर्बल चरित्रों की भी सृष्टि की है, जैसे दूल्हाजू, पीरअली इत्यादि।

स्थिर एवं गतिशील चरित्रः—

इस उपन्यास में दोनों प्रकार के चरित्रों का प्रयोग है। प्रथम वर्ग में वे पात्र है जो स्थिर हैं अर्थात् जिनका चरित्र एक ढाँचे में, एक विशेष दिशा, या विचार धारा में ढला हुआ है। ये बदलते नहीं। आरम्भ से अन्त तक एक से बने रहते हैं। अधिकतर इस वर्ग में वे आदर्श चरित्र हैं, जो अपने देशप्रेम, सतत्तोद्योग, दृढ़ता और आत्मविश्वास से हमें प्रभावित करते हैं। इस वर्ग में लक्ष्मीबाई, तात्या, नाना, सुन्दर, झलकारी आते हैं।

द्वितीय वर्ग में गतिशील अर्थात विकसित होते निरंतर परिवर्तित होते हुए चरित्र हैं। डाकू सागरसिंह डाकू से कैप्टन बनता है। धीरे २ वह हमें अपनी स्वाभक्ति और वीरता के प्रभावित कर लेता है।

दूल्हाजू पहिले रानी की ओर से मनोयोग पूर्वक युद्ध करते हैं। तनिक सी बात से नाराज होकर विश्वासघाती पीरअली से

षड्यंत्र करते हैं अन्त में युद्ध के समय दुर्ग के फाटक खोल देते हैं, सुन्दर के वध का कारण बनते हैं।

इसी प्रकार मोतीबाई और खुदाबख्श, भी निरन्तर विकसित होते रहते हैं। प्रारंभ में उन्हें राजा गंगाधर राव निकाल देते हैं, पर अन्त में ये दोनों राज भक्त प्रेमियों के रूप में हमारे समक्ष आते हैं।

बख्शी बख्शिनजू. पूरन झलकारी भी गतिशील हैं। झलकारी आरम्भ मे एक लज्जाशीला, कमनीय, नारी के रूप में हमारे सम्मुख आती है, धीरे २ वीर युद्ध प्रेमी बनती है, शिकार की ओर उसकी प्रवृत्ति हो जाती है। अन्त मे वह इतनी निर्भय बन जाती है कि रानी लक्ष्मीबाई जैसे वस्त्र पहिन कर अंग्रेज जनरल के सम्मुख पहुँच जाती है।

स्वयं रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र भी विकसित होता चलता है। अन्त तक पहुँचते २ वे धार्मिक प्रवृत्ति की नारी, अद्वितीय राजनीतिज्ञ एव रण-पंडिता बन जाती हैं। उनकी विनोदप्रियता कम हो जाती हैं और गम्भीरता, दार्शनिकता, दयालुता और दानशीलता बढ़ जाती हैं।

वर्मा जी ने दोनों प्रकार के चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विकास प्रस्तुत किया है। इन पात्रों के अन्तर्द्वन्द्वों को भी स्पष्ट कर दिया गया है।

वर्ग गत और व्यक्तिगत पात्र--

वर्गगत पात्रों मे उपन्यासकार का लक्ष्य सामान्य गुण चित्रित करना रहता है। पात्रो के कुछ वर्ग बनाये जा सकते हैं, और इनमें कुछ सामान्य गुण पाये जाते हैं. ये अपने वर्ग, देश, जाति का प्रतिनिधित्व करते है। उदाहरण स्वरूप अंगरेज पात्रों (डनलप, एलिस, गार्डन, मालकम, रोज इत्यादि) को ले लीजिये। इनमें चतुराई, कुटिलता. स्वार्थ सिद्धि, व्यापार कुशलता के सामान्य (common) गुण मिलते हैं। ये सदा अपना उल्लू सीधा करना

चाहते हैं। भारतीय नरेशों का शोषण, अर्थ संचय, देशी राज्यों को कम्पनी के राज्य में मिलाना, ये प्रवृत्तियाँ प्रत्येक अङ्गरेज पात्र में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान हैं।

अंगरेज पात्रों को भारतवासियों से घृणा है। यह घृणा किसी न किसी रूप में उनके हृदय से निकली है। उदाहरण के लिए कुछ वाक्यांश देखिये :—

"हाँ, पहले इन्होंने कहा हमारा टीका है। धर्म की बात। फिर हमने पुछवा दिया। डैमइट आल। भई कितनी जहालत भरा मुल्क है।"

"अभी यह कौम बिल्कुल नादान और जाहिल है। अंगरेजी पढ़ने से कुछ अकल सुधरेगी। बाईविल का पढ़ना मदरसों में इसीलिये जारी किया गया है। जब अंगरेजी का प्रचार हो जायेगा और बाईविल की संस्कृति इनके खून में बैठ जायगी, तब धरातल कुछ ऊंचा होगा।"

"हिन्दुओं की गाँठ मे शकुन्तला, कुछ वेद और कुछ ऐसा ही साहित्य है। मुसलमानों के पास कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्ताँ और उमर खैय्याम की रुबाइयाँ। बस खतम। बाकी सब कूड़ा, महज रद्दी।

"देश कुसंस्कारों से भरा हुआ है ... किसान बहुत मेहनती नहीं है ... चोर डाकुओं के मारे चैन नहीं ले पाते हैं ... रियासतों में बड़ा अन्धेर है।"

....

दूसरे वर्ग मे देश भक्त पात्र आते है। गुल मुहम्मद, गौसखाँ, रघुनाथसिंह, जवाहरसिंह, तात्या, नाना स्वामीभक्त, देशभक्त, आज्ञापालक सेवक है। ये अपने कर्तव्य के प्रति निरन्तर जागरूक हैं। इनमें देश प्रेम, वीरता, निष्ठा, सत्यता विद्यमान है। ये दोनों वर्ग (type) सफलता से चित्रित हुये है।

व्यक्तिगत पात्रों में वैयाक्तिक विशेषताए होती हैं। उपन्यास

कार प्रत्येक व्यक्ति को अपने पृथक रूप में चित्रित करता है। इस वर्ग के पात्रों में सामान्य गुण एक से होने पर भी निज़ी विशेषताएं अन्तर्निहित रहती है। इस वर्ग में रानी लक्ष्मीबाई, राव गंगाधर, अली बहादुर, झलकारी, बख्शी, मोती खुदाबख्श और तात्या आते हैं। प्रत्येक की अपनी विशेषताएं और दुर्बलताएं हैं, जिनके कारण हम उन्हें पसन्द करते या घृणा प्रदर्शित करते हैं। इनमें से कुछ पात्र अपने चरित्र गौरव के कारण हमारे स्थायी मित्र होजाते हैं। इनमें गुलमुहम्मद और बरहानुद्दीन आदर्श व्यक्ति हैं।

चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक आधार

यों तो घटना-प्रधान उपन्यास में चरित्र विश्लेषण की गुञ्जायश बहुत कम रहती है, क्योंकि उपन्यासकार के पास असंख्य घटनाओं के वर्णन की समस्या रहती है। फिर भी, वर्मा जी ने लक्ष्मीबाई का चरित्र विकास मनोवैज्ञानिक आधार पर किया है। बाल्य जीवन में जिन चरित्रगत विशेषताओं का निदर्शन है, वे ही हमें क्रम क्रम से विकसित होती दीखती है। स्वतन्त्र प्रेम, राजनीति अश्व-सचालन युद्धविद्या में निपुणता और बड़ी-बड़ी लड़ाइयों में नेतृत्व ये सब हमें धीरे धीरे विकसित होते दिखाये जाते हैं।

दूल्हाजू प्रेम से विरक्त होकर शत्रु बन बैठता है, उसके चरित्र के विकास में अहंभाव का विश्लेषण है। सागरसिंह का डाकू बनना फिर रानी लक्ष्मीबाई के सम्पर्क में रह कर कुशल सैनिक बनना, अलीबहादुर का चित्रण, नारायण शास्त्री-छोटी के रोमांस में मनोवैज्ञानिक आधार है।

नारी हृदय कोमल भावनाओं का अगाध सागर है। हल्दी कूँ कूँ के उत्सव पर सधवा स्त्रियाँ एक दूसरे के रोली का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है। रानी लक्ष्मीबाई भी इस उत्सव में भाग लेती हैं। बख्शिन से पति का नाम पूछने पर जो नाना लज्जा की भावनाएं

हैं। लेखक ने बड़े सुन्दर रूप में चित्रित की हैं। प्रेम तत्व का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण सुन्दर बन पड़ा है। झाँसी के कलाकारों की प्रशंसा में रानी का दुर्गा को सिद्धहस्त बताना मोती को खटकता है। नौकरों, सैनिकों, देशवासियों, कलाकारों, नर्तकियों सभी के चरित्रों का आन्तरिक पक्ष देकर ठोस मनोवैज्ञानिक भित्तियों पर खड़ा किया गया है।'

वातावरण

इस उपन्यास का सर्वाधिक आकर्षण केन्द्र इसकी ऐतिहासिक सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि है। वर्मा जी के उपन्यासों में देश काल का चित्रण बड़ा सूक्ष्म और सजीव होता है। जहाँ वे ऐतिहासिक दृष्टि से तत्कालीन सामाजिक पृष्ठभूमि चित्रित करते हैं, वहां गढ़, किले, नगर, प्रदेश, समीप का वातावरण, वृक्ष इत्यादि के भी व्योरेवार वर्णन करते हैं।

ऐतिहासिक वातावरणः—

स्वयं झाँसी के निवासी होने के कारण, वर्मा जी ने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई उपन्यास के ऐतिहासिक वातावरण को पूर्ण प्रमाणिक रखा है। इसके पीछे ·४ वर्ष का पठन पाठन, ऐतिहासिक अनुसंधान और अध्ययन है। भूमिका मे वर्मा जी ने अपने ऐतिहासिक अनुसन्धानों के विषय में निर्देश कर दिया है:—

"सन् १९३२ मे मैं इन अनुसंधानो मे लगा। कलक्टरी में कुछ सामग्री मिली। १८५७ में लोगों के बयान लिखे गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ—रानी "स्वराज्य' के लिए लड़ी थीं। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूंगा, ऐसा जो इतिहास के रग-रेशे स सम्मत हो और उसके सन्दर्भ में हो। इतिहास के कंकाल मे मांस और रक्त का संचार करने के लिये मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस साधन को मैंने जो कुछ रूप दे पाया है, वह पाठको के सामने है।"

इस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाता है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की सचाई के लिए उपन्यासकार प्रारंभ से जागरूक है। कथा के ऐतिहासिकता की रक्षा के लिए उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के संबन्ध की जो सामग्री उपलब्ध की उसका कलात्मक उपयोग किया है। अत्र तत्र ऐतिहासिक निर्देश (References) और परिशिष्ट में स्पष्टीकरण कर दिया है, जिससे ऐतिहासिक सत्यता प्रगट हो सके।

यह उपन्यास झाँसी के इतिहास से प्रारंभ होता है। "प्रस्तावना" भाग के १४ पृष्ठ झाँसी का इतिहास देकर तत्कालीन परिस्थितियों को स्पष्ट कर दिया है। सन् १८०४ में अंग्रेजों की पहली संधि और शिवराव भाऊ का शासन, उनके पुत्रों इत्यादि का संक्षेप में स्पष्टीकरण कर दिया गया है। शिवराव भाऊ झाँसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। पेशवाई निर्बल हो चुकी थी, सूबेदार सशक्त थे। बुन्देलखन्ड को अधिकृत करने के लिए अंग्रेजो को झाँसी के सूबेदार की मित्रता अभीष्ट थी। सन १८०४ की संधि का बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ा। सन १८१७ में बाजीराव से अंग्रेजों की अन्तिम संधि हुई। इस संधि ने पेशवा के संपूर्ण अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिये। उसी वर्ष शिवराव भाऊ के पौत्र रामचन्द्र राव के साथ दूसरी संधि हुई, जिससे पेशवा का स्थानापन्न कम्पनी सरकार को मनवाया गया। सन् १८३२ में रामचन्द्रराव और उसके वारिसों को राजा की उपाधि दी गई। उस दरबार मे शिवराव भाऊ के पुत्र रघुनाथ राव और गंगाधरराव भी थे। शिवरावभाऊ का जेठा पुत्र कृष्णराव था। उसका देहान्त हो चुका था। रामचन्द्र, कृष्णराव का पुत्र था। शिवराव भाऊ के जेठे पुत्र की सन्तान होने के कारण झाँसी की गद्दी उसको मिली थी।

रामचन्द्रराव की नाबालिगी के जमाने में शासन सूत्र उसकी

माँ सखूबाई के हाथ में था। जब वह वयस्क हो गया तो रामचन्द्र राव ने शासन सूत्र अपने हाथ मे ले लिया। मां को यह अखरा और उसने पुत्र के बध का प्रयत्न किया पर रामचन्द्रराव बच गया। रामचन्द्रराव अपनी माँ के साथ कठोर व्यवहार नहीं करना चाहता था। परन्तु उसके दोनों काका रघुनाथसिंह और गंगाधर राव, तथा दीवान सखूबाई को स्वतन्त्र नहीं छोड़ना चाहते थे। अत: यह कैद कर दी गई। रामचन्द्रराव निस्संतान मरा। फिर रघुनाथ-राव गद्दी पर बैठे। ये रंगीली प्रकृति के व्यक्ति थे। सन् १८३८ में रघुनाथराव का देहान्त हो गया। अनेक झगड़ों के उपरान्त सन १८३६ में गंगाधरराव झांसी की गद्दी पर बैठे। सम्पूर्ण उपन्यास इनके शासनकाल तथा इनकी विधवा रानी लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित है। लेखक ने यत्र तत्र घरेलू ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के गहरे रंगों में प्रस्तुत किया है।

जब राजा गँगाधरराव गद्दी पर बैठे, झाँसी राज्य के शासन को अंग्रेजों द्वारा चलते हुए ७-८ वर्ष हो गए थे। नगर का शासन राजा के हाथ में चला आता था। उपन्यासकार ने राजा गंगाधर-राव के व्यक्तिगत जीवन तथा झांसी के सामूहिक सामाजिक जीवन पर भी विहंगम दृष्टि डाली है। भारत के अन्य भागों के संचालन एवं शासन पर भी प्रकाश डाला गया है।

राजनैतिक स्थिति—

भारत पर अंग्रेजों का आधिपत्य क्रमशः फैलता जा रहा था ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारी जन धीरे २ अंग्रेजों का प्रभुत्व फैलाते जा रहे थे। झाँसी पर भी उनका अधिकार था। उन दिनों झाँसी का नायब पोलिटिकल ऐजेण्ट कप्तान डनलप था। राजा गङ्गाधरराव शासन अधिकार पाने की कोशिश पहले से ही कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उन्हें ये अधिकार प्राप्त हो गये, परन्तु मिलने से पूर्व कम्पनी सरकार के साथ फिर अहदनामा हुआ।

अङ्गरेजी हुकूमत में झाँसी में एक फौज रखी जाने की शर्त थी। नकद खर्चा न देकर राजा गंगाधरराव ने ? लाख ?७ हजार चार सौ अट्ठावन रुपये वार्षिक की आय राज्य लोलुप अंग्रेजों को दे दी थी। कप्तान गार्डन झाँसी स्थित अंग्रेजी सेना का एक अफसर था। वह पूरा अंग्रेज था—साहित्यिक, व्यापार कुशल स्वदेश प्रेमी, और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की वृत्ति से देखने वाला। अङ्गरेजों की दृष्टि भारत में रुपया ले जाकर इङ्गलैण्ड को समृद्धि-शाली बनाने की रहती थी।

भारतीय देशी राजा विलास में डूबे हुए थे। शराब, नर्तकियाँ और आमोद-प्रमोद की भीड़ लगी रहती थी। उनमें फूट थी, जरा जरा सी बात पर वे परस्पर लड़ा झगड़ा करते थे। अँगरेजों का चौरस करने वाला बेलन बेतहाशा, लगातार और जोर के साथ चल रहा था। अंगरेज लोग अपनी दूकान में हिन्दुस्तान को अधूरी या अधकचरी सौदा का रूप लिए नहीं देख सकते थे। मौका मिलते ही वे छोटे मोटे रजवाड़ों को हजम कर लेते थे।

वे चाहते थे कि भारतीय ऊँचे पदों पर न पहुँचने पावें, भारतीय संस्कृति न पनपे. भारत की समृद्धि बढ़ने न पावे। जनता स्वाधीनता का नाम ले तो उसको बड़ी रियासतों के अन्धेरों का संकेत कर चुप कर दिया जावे। बड़ी रियासत वाले जरा सा भी सिर उठावें, तो छोटी रियासतों को किसी न किसी बहाने घोंट घोंट कर बड़ी रियासतों को चुप रहने का सबक सिखाया जावे। पंचायतों का नाश कर दिया। वाइबिल की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई।

जयपुर, जोधपुर, बीकानेर इत्यादि राजपूत राज्य तटस्थ अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने में बड़प्पन मान रहे थे। निजाम हैदराबाद और ग्वालियर का सिन्धिया अंगरेजों को निज मित्र समझ कर उनके कार्यों में हस्तक्षेप न करते थे। बड़े बड़े राजा, महाराजा और नवाब अपनी अपनी जनता का शासन छोड़कर

अंग्रेजों का मुँह ताकने लगे थे। पुरुस्वार्थ शेष न रहा था। इस लिए विलासिता के पोखरों में घुस पड़े थे। अंग्रेजी बंदूक और संगीन उनकी पीठ पर थी। कोई भी जनता की परवाह न करता था।

अंग्रेजों ने पंजाब को परास्त करके हाल ही मे अपने हाथ में किया था। विहार और बंगाल में राज्य था ही। मध्यदेश बपौती का रूप धारण करता चला जा रहा था। इन सबके बीच में दो बड़े बड़े रोड़े थे—एक अवध की मुसलमानी नवाबी और दूसरी झाँसी की बड़ी हिन्दू रियासत। वे चाहते थे कि किसी प्रकार इन दोनों को भी समाप्त कर स्थायी रूप से कम्पनी के राज्य मे सम्मिलित कर लिया जावे।

ऐसी विषम स्थिति में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने सुप्त भारत को जाग्रत करने के लिए शंख फूँका। स्वयं वे- तात्या टोपे, नाना और अन्य स्वतन्त्रता प्रेमी महानुभावों की सहायता से स्वातन्त्र्य योजना कार्यान्वित करती रहीं; बहुत काल तक संघर्ष चला, छावनियों में अंग्रेजों के प्रति घृणा का प्रचार हुआ। १८५७ में भारतीय क्रांति फैली, जिसमें अनेक स्वातन्त्र्य प्रिय व्यक्तियों ने भाग लिया। सबसे महत्त्वपूर्ण भाग रानी लक्ष्मीबाई का था। यही इस उपन्यास में चित्रित किया गया है।

प्रारंभ से अन्त तक उपन्यासकार ने भारत की राजनैतिक परिस्थिति का परिचय कराया है। उसकी दृष्टि केवल झाँसी पर ही नहीं प्रत्युत समग्र भारत की राजनैतिक उथल पुथल संघर्ष और क्रांति पर रहा है।

उपन्यासकार ने चित्रित किया है कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई केवल आपकी निजी सम्पत्ति, प्रतिष्ठा या आन के लिए नहीं लड़ी, प्रत्युत वे समस्त भारत में व्याप्त स्वाधीनता संग्राम की नेत्री बन गई। उनकी योजना सबने एक स्वर से स्वीकार की; आजीवन वे देश की आजादी और विदेशियों को निकालने के प्रयत्न में रहीं और अन्त में स्वराज्य की नींव का प्रथम पत्थर बनीं।

सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति—

सामाजिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत कर वर्मा जी ने इस उपन्यास को सजीव बना दिया है। यह राजा-रानियों या नवाबों का उपन्यास ही नहीं, साधारण जनता के दुख दर्द एवं सामाजिक स्थिति से भी सम्बन्धित है।

झाँसी मे उस समय मन्त्रशास्त्री, तन्त्रशास्त्री, वैद्य, रणविद इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ थे। शक्ति, शैव, वाममार्गी, वैष्णव, सभी काफी तादाद मे रहते थे। अधिकांश वैष्णव एवं शैव थे···इन सब के सघर्ष मे अनेक जातियां और उपजातियाँ जिनको शूद्र समझा जाता था, उन्नति की ओर अग्रसर हो रही थीं। व्यक्तिगत चरित्र का सुधार, घरेलू जीवन को अधिक शान्त और सुखी बनाना तथा जातियों की श्रेणी मे ऊँचा स्थान पाना यह उस प्रगति की सहज आकांक्षा थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ पहिनते थे—यह उनकी ऊंचाई की निशानी थी। ब्राह्मण प्राय: कट्टर होते थे।

कुछ शूद्रों ने जनेऊ पहिनने आरंभ कर दिये थे। उनके इस काम मे बुन्देलखण्डी और महाराष्ट्र ब्राह्मणों का समर्थन था। झाँसी नगर मे ब्राह्मण काफी सख्या मे थे। इन सब का बहुत बड़ा भाग इस प्रगति के विरुद्ध था। इस लिए आन्दोलन प्राय पुराने मत के पक्ष में चलते रहते थे।

"समाज मे सन्तुलन यथेस्ट नहीं था। असमानता, विषमता स्पष्ट थी। परन्तु आर्थिक शृंखला की कड़ियाँ मजबूती के साथ जुड़ी हुई थीं। धन इकट्ठा हो होकर बट जाता था। एक-एक आश्रित पर शत-शत आश्रित टँगे हुए थे लिप्त और संलग्न थे। आश्रय और आश्रित सब क्रिया शील। जहाँ आश्रम श्रमहीन, प्रयत्न रहित और दुःशील हुआ कि गया और उसका स्थान दूसरे प्रबल सबल स्थानापन्न ने ग्रहण किया। खोखला गौरव अपनी कहानी बहुत अल्प समय तक ही कह सकता था।"

रानियों को दहेज में दासियाँ मिलने की प्रथा थी। अनेक दासियां राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं, या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से पृथक हो जाती थीं। पर्दा प्रथा धीरे २ टूट रही थी। उच्च वर्ग में नाचने गाने और अभिनय का प्रचार था। हरदी कूँ कूँ का उत्सव बड़ी सजधज से मनाया जाता था। किले में सब जातियों के व्यक्तियों को जाने की आजादी थी। कोरी और कुम्हार अछूत नहीं समझे जाते थे। हिन्दू मुसलमानों में एकता थी; व्यापार अच्छा चलता था। शहरों में चहल पहल मची रहती थी; धन धान्य खूब था; स्त्री पुरुष सुखी दिखलाई पड़ते थे।

प्रकृति चित्रण :—

वर्मा जी ने उल्लसित प्रकृति के बड़े मर्म स्पर्शी वर्णन इस उपन्यास में यत्र तत्र जड़ दिये हैं। व्यक्तिगत परिचय एवं प्रकृति से निकट साहचर्य होने के कारण प्रकृति के इन चित्रों में सजीवता एवं सचाई है। राज घराने से सम्बन्धित होने के कारण इस उपन्यास में प्रकृति चित्रण को वह प्रमुखता प्राप्त नहीं हो सकी है, जो "मृगनयनी" में मिली है, तथापि जहां कहीं उन्हें अवसर प्राप्त हुआ प्राकृतिक पृष्ठभूमि का उपयोग किया गया है। "रत्नावली" नाटिका के अभिनय से पूर्व प्रकृति का मादक मोहक एक शब्द-चित्र देखिये:—

"चैत लग गया था। बसन्त ने पत्थरों और कंकड़ों तक पर फुलझाड़ियाँ पसार दीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज को सजा दिया और धरती का रंग बिरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभंजन में भी महक समा गई। रात और दिन संगीत से पुलकित हो उठे।"

हरदी कूँ कूँ के उत्सव के आगमन से पूर्व का प्राकृतिक चित्रण संक्षिप्त पर रंगीन है:—

"बसन्त आया। प्रकृति ने पुष्पाञ्जलियाँ चढ़ाईं। महकें

बरसाई। लोगों को अपनी श्वास तक में परिमल आभास हुआ। किले के महल में रानी ने चैत्र की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की स्थापना की।"
— पृष्ठ ६५

अलंकारों के रूप में कहीं प्रकृति का उपयोग हुआ है। जैसे—

"फूल सदा नहीं खिलते। उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति ही सदा मन में बसती है। नृत्य और गान की भी स्मृति सुखदायक होती है। परन्तु इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और इसके भीतर आत्मा है।"

"रानी हँस पड़ीं, जैसे संध्या के पीले बादलों में दामिनी दमक गई।'

रात्रि के वर्णन में भयानकता का सौंदर्य देखिए:—

"फरवरी हो चुकी थी। चाँदनी डूब चुकी थी। रात बिल्कुल अंधेरी, हवा ठन्डी और मन्द। तारे दमक रहे थे कुछ कुछ बड़े असंख्य छोटे छोटे जैसे चाँदनी चादर छितरा कर छोड़ गई हो। नीचे सघन अंधकार सब दिशाओं में गुलाई सी बाँधे हुए। झींगुर झंकार रहे थे।"
—पृष्ठ २५६

बेतवा नदी का चित्र देखिए कितना सजीव और सफल खिंचा है। इसमें उपन्यासकार का सूक्ष्म निरीक्षण दर्शनीय है। ऐसा चित्र वही खींच सकता है, जिसने तूफानी नदी को पार करने का अनुभव किया हो:—

"बेतवा की धार पुंज के ऊपर पुंज दिखाई पड़ती थी। क्रम अभंग और अनन्त सा। जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जल पुंज दूसरे से संघर्ष खाता और एक दूसरे से आगे जाने का अनवरत, पृथक अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी में फेन ही फेन दिखलाई पड़ता था। झाग की इतनी बड़ी निरन्तर बहती और उत्पन्न होती हुई राशियाँ आड़े आ ज[illegible]

घुड़सवारों को सामने का किनारा नहीं दिखलाई पड़ पाता था।

(देखिए पृष्ठ २८३)

"झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई" जैसे राजनैतिक उपन्यास में भी वर्मा जी ने यथा संभव उल्लासपूर्ण या परिस्थिति के अनुसार नैराश्य, पूर्ण या भयानक प्रवृत्ति वर्णन किए हैं। इनसे वातावरण सजीव और सच्चा बन गया है, बुन्देलखण्ड के जंगल नदियें, वृक्ष और फूल सजीव हो कर हमारे सामने आ खड़े हुए हैं। सहज स्वाभाविकता और प्रमाणिकता इन वर्णनों की प्रमुख विशेषताएं।

श्री "श्याम" जोशी एम० ए० के शब्दों में; इन वर्णनो को हम गद्यकाव्य या चित्रकाव्य भी कहदें तो अत्युक्ति नहीं। ऐसे चित्रों के दो ही उपयोग हैं—एक तो इनसे वातावरण निर्माण में सहायता मिलती है, दूसरे वे रचना को हृदयग्राही और मधुर बना देते हैं। वर्मा जी ने इतिहास की काली रेखाओं के बीच वातावरण के सुनहरी चटकीले रंग भर कर कवित्व द्वारा उसमें प्राण प्रतिष्ठा भी कर दी है, जिससे उपन्यास सजीव हो उठा है।"

मुख्य समस्याएँ

"झाँसी की रानी" ऐतिहासिक उपन्यास है तथा राजनैतिक परिस्थिति का सच्चा चित्र उपस्थिति कर देना उपन्यासकार का उद्देश्य है। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप में उसने अनेक छोटी बड़ी समस्याओं की ओर निर्देश कर अपने विचार प्रकट किये हैं। वर्मा जी इस बात के लिये सतर्क रहे हैं कि कहीं विभिन्न विषयों या समस्याओं के प्रतिपादन से वे अपने उपन्यास को रोचकता एवं सजीवता नष्ट न कर दें।

(१) स्वाधीनता के लिए भारतीयों का प्रथम योजनावद्ध संघर्ष

उपन्यास में राजनीति को महत्ता देने का तात्पर्य यह है कि वर्माजी ने भारत निवासियों का अंग्रेजी सत्ता के विरूद्ध प्रथम क्रान्तिकारी प्रयास स्पष्ट किया है। १८५७ की क्रान्ति क्यों हुई ?

सन् १८५६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार भारतवर्ष भर को ईसाई बनाने का स्वप्न देखने लगे थे। अस्पृश्य चर्बी वाले कारतूसों की वास्तविकता को स्वयं कई जिम्मेदार लेखकों ने स्वीकार किया है। कम्पनी के बोर्ड के सदस्य उस स्वर्ण घड़ी की प्रतीक्षा में थे, जब समग्र हिन्दुस्तान—हिन्दू और मुसलमान अपने धर्म को छोड़कर कम्पनी के ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेंगे। ईसाई धर्म के प्रचार के लिए काफी रकम पृथक रख दी गई थी।

दूसरी ओर अँग्रेजों के आतंक, घृणा, शोषण, साम्राज्य-लोलुपता, धार्मिक उत्साह से तंग आकर हिन्दुस्तानी लोग नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह, अवध की बेगम जीनत महल और रानी लक्ष्मीबाई की भारत स्वाधीनता योजना को सफल बनाने में लगे थे।

अंग्रेजों ने अपनी भाषा एवं संस्कृति के व्यापक प्रचार के लिये स्कूल खोले, नौकरियों के लिये अंग्रेजी लिखने वाले क्लर्क भारतीय मस्तिष्क में गुलामी की वृत्ति उत्पन्न की।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अङ्गरेजों ने कानून की प्राण प्रतिष्ठा हिन्दुस्तान में नहीं की थी। वे चाहते थे कि देश में पूर्ण शान्ति हो, उनका अधिकार हमेशा बना रहे, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें सब कायदे कानून में बाँध कर अपना अपना काम करते चले जायं। अनुशासन में शिथिलता न आने पाये। तभी अंग्रेजी राज्य निर्विघ्न चल सकता है उन लोगों ने हिन्दू-नरेशों और मुसलमानों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े गुने थे इसलिये वे अपने शासन को उन सब गड्ढों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौक़ा पाते ही उन्हें ढकेल दिया करते थे।

३—भारतीय क्रान्ति के असफल होने के कारण—

वीर और समृद्ध होते हुए भी विदेशियों द्वारा भारत में

हिन्दोस्तानी क्यों पराजित हुए ? वर्मा जी ने अप्रत्यक्ष रूप से इसका भी यत्र-तत्र संकेत कर दिया है। इसका मूल कारण पारस्परिक फूट और समय पर अपने समीप के राजा को उचित सहायता प्रदान न करना था। भारत का यह दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ जब एक राजा नवाब पर मुसीबत आई तो दूसरा उसकी सहायता करने के स्थान पर दूर बैठ कर तमाशा देखता और यह सोचता रहा कि यह संकट उस तक न आवेगा। अकेले-अकेले रह कर हम विदेशियों द्वारा निरन्तर पराजित होते रहे हैं।

राज्य क्रान्ति में भी कई राज्य, (जैसे ग्वालियर, हैदराबाद) अँग्रेजों से मिले रहे, रुपये सेना, तथा सिपाहियों द्वारा सहायता प्रदान करते रहे। इस फूट से विपक्षियों ने एक एक कर हमें पराजित कर डाला। यदि सब मिलजुल संगठित होकर उनसे मुकाबला करते, तो अवश्य सफल होते।

विलासिता, देशी रियासतों के अत्याचार और अपनी पंचायतों का न रहना—हमारी अशक्तता के कारण बने। देशी राजा अपनी वासना तृप्ति में ही मस्त रहे और उनके अत्याचार बढ़ते रहे। अंग्रजों ने हिन्दुस्तानियों के हृदय में रियासती शासन के प्रति घृणा और अपनी न्याय व्यवस्था के प्रति आकर्षण उत्पन्न किया।

स्वयं रानी की फौज में पीरअली और दूल्हाजू जैसे विश्वासघाती व्यक्ति थे, जो पराजय का कारण बने। हमारे राजा और नवाब अपने अभिमान में मस्त बने रहे।

४—जाति बिरादरी की सँकुचितता—

वर्मा जी ने इस उपन्यास में जहाँ राजा गंगाधर राव के अत्याचार और क्रोध में चित्रित किये हैं, वह जाति बिरादरी की कट्टरता, संकुचितता और अत्याचारों का भी चित्रण किया है। कुछ निम्न जाति वाले जनेऊ धारण कर लेते हैं। इस पर उच्च वर्ण झगड़ा खड़ा कर लेते हैं। मामला भयानक होकर गंगाधर राव के

पास पहुँचता है। जाति और धर्म का झगड़ा था और राजा को इसमें हस्तक्षेप न करना चाहिये था किन्तु राजा ने दखल देने की ठानी। जनेऊ पहनने वालों ने कहा कि "ब्राह्मणों के अलावा भी अनेक जातियाँ जनेऊ पहनती हैं इसलिये उन्हें भी आज्ञा प्राप्त होनी चाहिये।" राजा ने इस न्यायोचित माँग को अनुचित समझा और दण्ड दिया गया।

उपन्यासकार ने इस अत्याचार के प्रति घृणा उत्पन्न की है। हम पढ़ते २ स्वयं जाति पाँति की कट्टरता पर क्रुध हो उठते हैं। सवर्णों के निम्न वर्णों पर अत्याचार स्पष्ट हो जाते हैं। जाति पाँति ने हिन्दुओं को छोटे छोटे सहस्रों टुकड़ों में बाँट रखा है, जिनका खान पान और ब्याह शादी में उतना भी सम्बन्ध नहीं है जितना चिड़िया घर के पशु पक्षियों का आपस में होता है। जाति पाँति के कारण हम सदा अपनों को पराया बनाते आये हैं। देश में द्विजों ने शूद्रों के प्रति जो अत्याचार किये हैं, वे उपन्यासकार ने उभार दिये हैं।

५---अन्तर्जातीय विवाहों का पक्ष---

'मृगनयनी तथा 'झाँसी की रानी' दोनों में अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में संकेत मिलते है। गूजर कन्या निन्नी का विवाह राजा मानसिंह से और लाखी अटल अहीर-गूजर का विवाह सम्बन्ध होता है। राजा को तो कोई कुछ नहीं कहता पर जाति वालों की हृदय हीनता और अत्याचारों के कारण अटल और लाखी गाँव छोड़ कर चले जाते हैं और बड़ी मुसीबत सहते हैं। 'झाँसी की रानी' में नारायण शास्त्री और छोटी का सम्बन्ध इसी प्रकार का है। वे जाति की कठोरता का शिकार बनते हैं, पर रहते हैं प्रसन्न और सुखी। पुरानी बातों पर अड़ना और उपयोगी नई योजना से डरना—ये राष्ट्र के लिये अहित कर है। जाति पाँति तोड़कर समता और बन्धुता उत्पन्न होनी चाहिये।

शैली-भाषा-रस—

इस उपन्यास को ऐसी सरल एवं प्रवाहमयी शैली में लिखा गया है कि तत्कालीन कला, संस्कृति, सभ्यता, आर्थिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि सभी जैसे हमारे सामने खड़ी हो जाती हैं। इतिहास के प्रति इतनी वफादारी और साथ ही सरसता, कलात्मकता और कौतूहल—ये कठिनता से एक साथ मिलते हैं।

वर्मा जी ने घटनाओं का नियोजन इस ढंग से किया है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी हमारे मन पर स्पष्टता से अंकित हो जाता है और कहानी का भी अबाध आनन्द आता रहता है।

जहाँ इतिहास के स्थल आते हैं (जैसे पृष्ठ १७६ , पृष्ठ ३२७ वहाँ उपन्यासकार विस्तार से पृष्ठभूमि निर्माण में संलग्न हो जाते हैं। कथा की धारा कुछ क्षीण हो जाती है, पर ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं। इसमें शुष्कता नहीं है। थोड़ी दूर चल कर फिर आनन्द आने लगता है। पाठक रानी के चरित्र सम्बन्धी घटनाओं में पुनः तन्मय हो जाते हैं। इतिहास की अपेक्षा इसमें उपन्यासत्व प्रचुरता से विद्यमान है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में प्राय लेखक कल्पना और भावना के स्पर्श से चरित्रों को तोड़ मरोड़ डालते हैं, घटनाओं का काल इत्यादि समझ में नहीं आता। वर्मा जी का यह उपन्यास इस त्रुटि से सर्वथा मुक्त है। रानी लक्ष्मीबाई, राजा गंगाधर राव, मोतीबाई, तात्या, नवाब अलीबहादुर, जूही, दुर्गा, मुगलखाँ आदि सब पात्र ऐतिहासिक हैं।

वर्मा जी की भाषा सरल स्वभाविक है। उसमें सरसता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। कथोपकथन की शैली से पात्र अपने मन्तव्यों को स्पष्टता से कह सके हैं। भावों को प्रगट करने के लिए उपयुक्त शब्दों का चयन किया गया है। कहीं २ स्थानीय बुन्देलखन्ड

का बड़ा स्वभाविक प्रयोग किया है। कहीं-कहीं अलंकारों की अपूर्व छटा है।

यह उपन्यास वीर रस से ओत प्रोत है। स्वाधीनता संग्राम की र सेनानी रानी लक्ष्मीबाई का नाम सुनते ही नसें फड़क उठती दय में साहस और वीरता का सञ्चार हो उठता है। वर्माजी ारतीय; क्रान्ति को ऐसे सुन्दर रूप में चित्रित किया है कि मन ीर रस उत्पन्न हो उठता है, रग रग में रक्त संचार हो जाता है। ां जी ने अन्त तक रानी को विदेशियों से संघर्ष करते हुए चित्रित ा है। एक तो कथानक ही वीर रस से पूर्ण, दूसरे वर्मा जी की वशाली लेखनी—वीर रस का बड़ा सफल चित्रण किया गया है म्भ के भाग में रानी के शौर्य की झलक मिलने लगती है। उनकी याम प्रियता, घुड़सवारी, शस्त्र संचालन देखकर मन उत्साह से जाता है। अन्तिम भाग में युद्धों का बड़ा सजीव वर्णन है। वीर के आधिक्य ने अन्य रसों—शृंगार, हास्य, करुण इत्यादि को लिया है। इनके छींटे मात्र कहीं कहीं दिखाई देते हैं।

शृंगार का स्पर्श कहीं कहीं किया गया है। मोतीबाई खुदा-, मुन्दर-रघुनाथसिंह, जुही-तात्या आदर्श प्रेमियों के उदाहरण न्हें लेखक ने बहुत कम स्थान दिया है। एक-एक डेढ़-डेढ़ पृष्ठों केत मात्र सा कर दिया है। वह वीर रस के प्रतिपादन में ही तन्मय हुआ है। युद्ध प्रधान उपन्यास होने के कारण हास्य रस ी कुछ हलके स्पर्श मिलते हैं। वीर रस प्रधान इस उपन्यास का करुण और शान्त रसों में हुआ।

———

राष्ट्रीय ब्लाक वर्क्स, आगरा।